मूल्य : ₹ 50

सितम्बर 2026

आई.एस.ओ. 9001: 2015 संगठन

भाकृअनुप
ICAR

खेती

बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ

• इस अंक में •

पशुधन स्वास्थ्य में लाभकारी इन्फ्रारेड थर्मल इमेजिंग तकनीक

कृषक समृद्धि की दिशा में खेत बचाओ अभियान

रेनबो ट्राउट का वैज्ञानिक पालन एवं प्रजनन

ताड़ उत्पादन से भरपूर संभावनाएं

महानिदेशक के डेस्क से

परंपरा की जड़ों से नवाचार तक

भारत की कृषि केवल अन्न उत्पादन की व्यवस्था नहीं, बल्कि हमारी सभ्यता, संस्कृति और जीवन दृष्टि की आधारशिला है। खेत से खलिहान और खलिहान से रसोई तक की यात्रा में हमारी लोकपरंपराएं, पर्व-त्योहार, खान-पान, स्वास्थ्य और सामाजिक जीवन एक-दूसरे से गहराई से जुड़े हैं। भारतीय ज्ञान परंपरा ने कृषि को प्रकृति के साथ सहअस्तित्व की जीवन-पद्धति के रूप में देखा है, जहां मृदा, जल, बीज, पशुधन, ऋतुचक्र और मानव स्वास्थ्य परस्पर संबद्ध हैं। प्रचलित कहावत 'जैसा अन्न, वैसा मन' इसी जीवन-दृष्टि को रेखांकित करती है। आज जब पोषण-केंद्रित कृषि और स्वस्थ जीवन पर विशेष बल दिया जा रहा है, तब यह लोकवाक्य और भी प्रासंगिक प्रतीत होता है।

सितम्बर का माह कृषि, संस्कृति और लोकजीवन के इस जीवंत संबंध को विशेष रूप से सामने लाता है। ओणम और नुआखाई जैसे पर्व नई फसल, कृषि समृद्धि और प्रकृति के प्रति कृतज्ञता की भावना से जुड़े हैं। नुआखाई में नई उपज का स्वागत किसान के श्रम और धरती की उदारता के प्रति सामूहिक आभार की अभिव्यक्ति है। नई फसल का पहला अन्न परिवार और समुदाय के साथ साझा करने की परंपरा हमें यह संदेश देती है कि अन्न में केवल पोषण ही नहीं, बल्कि किसान का श्रम, प्रकृति का योगदान और समाज की सहभागिता भी समाहित है।

हमारे अनेक लोकपर्व प्रकृति, पशुधन, आहार, स्वास्थ्य, संयम और सामुदायिक जीवन के विविध पक्षों को अभिव्यक्त करते हैं। जहां विश्वकर्मा पूजा श्रम, कौशल, औजारों और तकनीक के सम्मान का पर्व है, कृषि यांत्रिकीकरण और तकनीकी नवाचार के वर्तमान दौर में इसका संदेश और भी प्रासंगिक हो जाता है। वहीं पितृपक्ष हमें अपनी जड़ों, पूर्वजों और उस समृद्ध कृषि विरासत का स्मरण करवाता है, जिसमें पीढ़ियों के अनुभव और स्थानीय ज्ञान का विशाल भंडार निहित है। इसी परिदृश्य में भारतीय कृषि की इस समृद्ध विरासत को आधुनिक विज्ञान से जोड़ना आज समय की आवश्यकता है।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद सहित देश के कृषि विश्वविद्यालय और अनुसंधान संस्थान जलवायु अनुकूल, संसाधन कुशल, पोषण केंद्रित और तकनीक सक्षम कृषि के विकास के लिए निरंतर अनुसंधान एवं नवाचार कर रहे हैं। स्थानीय परिस्थितियों के अनुकूल उन्नत किस्में, मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन, सूक्ष्म सिंचाई और कृषि यांत्रिकीकरण जैसी तकनीकें खेती को अधिक दक्ष और टिकाऊ बना रही हैं। वहीं ड्रोन, रिमोट सेंसिंग, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, डिजिटल कृषि, मौसम आधारित कृषि परामर्श और जैव-आधारित प्रौद्योगिकियां किसानों को अधिक वैज्ञानिक एवं समयानुकूल निर्णय लेने में सक्षम बना रही हैं।

भारतीय ज्ञान परंपरा और आधुनिक विज्ञान का समन्वय कृषि के लिए नई संभावनाओं के द्वार खोल रहा है। हमारे पूर्वजों ने अनुभव और स्थानीय परिस्थितियों के आधार पर जो ज्ञान संचित किया, आधुनिक विज्ञान द्वारा उसे परीक्षण, प्रमाण और नवाचार की कसौटी पर परखकर अधिक उपयोगी एवं प्रभावी बनाया जा रहा है। स्थानीय फसलें और पारंपरिक खाद्य विविधता आज पोषण सुरक्षा तथा जलवायु अनुकूलन के नए अवसर प्रदान कर रही हैं। इसी प्रकार जल संरक्षण, मिश्रित एवं विविधीकृत खेती, जैविक संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग और पशुधन आधारित कृषि से जुड़े पारंपरिक अनुभव टिकाऊ कृषि प्रणालियों का सुदृढ़ आधार हैं।

किसान-केंद्रित योजनाएं और संस्थागत प्रयास तभी सार्थक होंगे, जब वैज्ञानिक ज्ञान और तकनीकी नवाचार प्रयोगशालाओं एवं अनुसंधान संस्थानों से निकलकर खेतों तक पहुंचें तथा किसान की आय, उत्पादकता और जीवन-गुणवत्ता में वास्तविक सुधार लाएं। इसके लिए फसल विविधीकरण, जोखिम प्रबंधन, मूल्य संवर्धन, भंडारण, प्रसंस्करण, बाजार संपर्क और डिजिटल सेवाओं को मजबूत करने के साथ-साथ पौष्टिक आहार और सुरक्षित खाद्य उत्पादन को भी कृषि विकास का अभिन्न अंग बनाना होगा।

कृषि का उद्देश्य केवल अधिक उत्पादन प्राप्त करना नहीं, बल्कि किसान की समृद्धि, बेहतर पोषण, स्वस्थ जीवन और सुरक्षित पर्यावरण सुनिश्चित करना भी है। हमारी लोक परंपराएं ज्ञान की जड़ें हैं, कृषि-विज्ञान उसका विवेक है और आधुनिक तकनीक उसके नए पंख। इन तीनों का समन्वय भारतीय कृषि को अधिक उत्पादक, प्रतिस्पर्धी, टिकाऊ और प्रकृति अनुकूल बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

सितम्बर के पर्व और परंपराएं हमें इसी समन्वय का संदेश देते हैं कि अन्न का सम्मान करें, अन्नदाता के श्रम का सम्मान करें और प्रकृति के साथ संतुलन बनाए रखते हुए विज्ञान एवं नवाचार को खेत-खलिहान तक पहुंचाएं। यही हमारी कृषि परंपरा की निरंतरता है और यही विकसित, आत्मनिर्भर एवं स्वस्थ भारत की कृषि का मार्ग भी।

(डा. मांगी लाल जाट)
सचिव (डेयर) एवं महानिदेशक (भाकृअनुप)

भाकृअनुप
ICAR

खेती

कृषि विज्ञान द्वारा ग्रामोत्थान की मासिक पत्रिका

वर्ष: 79, अंक: 5, सितम्बर 2026

संपादन सलाहकार समिति

1. **डा. राजबीर सिंह** — **अध्यक्ष**
उपमहानिदेशक (कृषि विस्तार)
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली

2. **डा. अनुराधा अग्रवाल** — **सदस्य**
परियोजना निदेशक (कृज्ञाप्रनि)
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली

3. **डा. विनोद कुमार सिंह** — **सदस्य**
निदेशक
भाकृअनुप-क्रीडा, हैदराबाद

4. **डा. धीर सिंह** — **सदस्य**
निदेशक
भाकृअनुप-राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल

5. **डा. के.के. सिंह** — **सदस्य**
कुलपति
सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि विश्वविद्यालय
मोदीपुरम, मेरठ

6. **श्री हर्षवर्धन** — **सदस्य**
प्रधान जनसंपर्क अधिकारी, इफको, नई दिल्ली

7. **श्री रितु राज** — **सदस्य**
कृषि पत्रकार

8. **सुश्री नीलम त्यागी** — **सदस्य**
प्रगतिशील किसान

9. **सुश्री सुनीता अरोड़ा** — **सदस्य सचिव**
संपादक, हिन्दी संपादकीय एकक (कृज्ञाप्रनि)
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली

प्रधान संपादक
डा. अनुराधा अग्रवाल
संपादक
सुनीता अरोड़ा

प्रभारी (उत्पादन एकक)
पुनीत भसीन

प्रभारी (व्यवसाय एकक)
दूरभाष: 011-25843657
E-mail: businessuniticar@gmail.com
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन, पूसा गेट, नई दिल्ली-12

एक प्रति: रु. 50.00 वार्षिक : रु. 500.00
विशेषांक : रु. 200.00

E-mail : khetidipa@gmail.com

डिस्क्लेमर
लेखों में व्यक्त विचारों, जानकारियों, आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं। उनसे भाकृअनुप की सहमति आवश्यक नहीं है। पत्रिका में प्रकाशित लेखों तथा अन्य सामग्री का कॉपीराइट अधिकार भाकृअनुप-डीकेएमए के पास सुरक्षित है। इन्हें पुन: प्रकाशित करने के लिए प्रकाशक की अनुमति अनिवार्य है। रसायनों/कीटनाशकों की डोज संबंधित संस्तुतियों का प्रयोग विशेषज्ञों से परामर्श के बाद करें। समस्त विवादों के लिए न्याय क्षेत्र दिल्ली होगा।

विषय-सूची

निदेशक की कलम से
पोषण क्रांति की नई राह-जैव संवर्धित फसलें-**अनुराधा अग्रवाल**

4 उद्यमिता
देसी गोवंश आधारित लाभकारी डेरी व्यवसाय
महेन्द्र सिंह, गुंजन सनाढ्य, रिशिका चौधरी, घनश्याम मीणा **और** राकेश कुमार

12 पहल
कृषक समृद्धि की दिशा में खेत बचाओ अभियान
शुभ्रांशु सिंह, रोहन शेरावत, पुष्पेन्द्र यादव, अमन सिंह **और** देवेश पाठक

7 आधुनिक
पशुधन स्वास्थ्य में लाभकारी इन्फ्रारेड थर्मल इमेजिंग तकनीक
सोहनवीर सिंह

15 सफलता गाथा
मशरूम उत्पादन से बनी सफल उद्यमी
दिव्या कुमारी **और** बी.सी. अनु

10 देखभाल
बकरियों के मेमनों का वैज्ञानिक प्रबंधन
चन्दा सिंह **और** प्रतीक्षा पांडा

18 मत्स्य पालन
रेनबो ट्राउट का वैज्ञानिक पालन एवं प्रजनन
रेनू जेठी **और** किशोर कुणाल

विषय-सूची

21 चारा

जलवायु अनुकूल मकचरी की वैज्ञानिक खेती

एम.बी. रेड्डी **और** सुमन सेन

23 अवसर

ताड़ उत्पादन से भरपूर संभावनाएं

महिपाल चौधरी, अनुषा एम.एन., बी. कृष्णा राव **और** संजय सातपुते

27 उपयोगी

फोग है शुष्क क्षेत्रों का उत्तम पशु चारा

प्रियंका गौतम, शांतनु रक्षित, बनवारी लाल, बसंती ज्योत्सना **और** वेद प्रकाश

29 कृषि कैलेण्डर

सितम्बर के मुख्य कृषि कार्य

राजीव कुमार सिंह, अवनीश प्रकाश सिंह, अंजली पटेल, विनय उपाध्याय, कपिला शेखावत **और** आदित्य सिंह

महानिदेशक के डेस्क से

आवरण II

परंपरा की जड़ों से नवाचार तक

पुस्तक समीक्षा

आवरण III

आधुनिक सस्य क्रियाएं

निदेशक की कलम से

पोषण क्रांति की नई राह-जैव संवर्धित फसलें

आज कृषि का उद्देश्य केवल अधिक अनाज उत्पादन करना नहीं है, बल्कि ऐसी खाद्य व्यवस्था तैयार करना भी है जो देशवासियों को पर्याप्त और पौष्टिक आहार उपलब्ध करवा सकें। बदलते समय में जब कुपोषण, सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी और जीवनशैली से जुड़ी स्वास्थ्य समस्याएं एक साथ चुनौती बन रही हैं, तब जैव संवर्धित फसलें कृषि और पोषण सुरक्षा के बीच एक महत्वपूर्ण कड़ी बनकर उभर रही हैं। इन फसलों में प्रजनन एवं वैज्ञानिक तकनीकों द्वारा आयरन, जिंक, प्रोटीन, विटामिन और अन्य आवश्यक पोषक तत्वों की मात्रा बढ़ाई जाती है। जैव संवर्धित फसलें केवल कृषि विज्ञान की नई उपलब्धि नहीं हैं, बल्कि बदलती पोषण जरूरतों के अनुरूप खेती की दिशा में एक महत्वपूर्ण बदलाव है। आज चुनौती सिर्फ इतनी नहीं है कि हर व्यक्ति को पर्याप्त आहार मिले, बल्कि यह भी सुनिश्चित करना है कि उस आहार में शरीर के लिए अभी आवश्यक पोषक तत्व भी मौजूद हों। इस सोच ने फसल में पोषण की अवधारणा को जन्म दिया है। इसलिए अब कृषि की दिशा 'अधिक उत्पादन' से आगे बढ़कर 'अधिक पौष्टिक उत्पादन' की ओर ले जाने की आवश्यकता है।

जैव संवर्धित फसलों की विशेषता यह है कि पोषण का संवर्धन फसल के उत्पादन स्तर पर ही किया जाता है। उदाहरण के लिए, जिंक से समृद्ध गेहूं, आयरन से भरपूर बाजरा तथा अधिक पोषण वाले अन्य अनाज ऐसी फसलें हैं जिन्हें सामान्य कृषि पद्धतियों के साथ उगाया जा सकता है। इससे किसान को अलग से कोई विशेष खाद्य प्रसंस्करण प्रक्रिया अपनाने की आवश्यकता नहीं होती। यही कारण है कि जैव संवर्धन को ग्रामीण क्षेत्रों में पोषण सुधार का अपेक्षाकृत सरल और टिकाऊ माध्यम माना जाता है।

भारत में बाजरा, गेहूं, चावल, मक्का, दलहनों और अन्य फसलों की जैव संवर्धित किस्मों पर वैज्ञानिक संस्थानों में महत्वपूर्ण कार्य किया गया है। विशेष रूप से श्री अन्न फसलों में आयरन, जिंक, प्रोटीन और अन्य पोषक तत्वों की बेहतर मात्रा वाली किस्में विकसित करने पर जोर दिया जा रहा है। ये फसलें जलवायु अनुकूलता, कम पानी में उत्पादन और पोषण मूल्य के कारण भविष्य की टिकाऊ कृषि में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं।

जैव संवर्धन का एक महत्वपूर्ण पहलू किसान की आय भी है। यदि पोषण समृद्ध किस्मों की बाजार में मांग विकसित की जाए और किसानों को गुणवत्तापूर्ण बीज, तकनीकी सलाह तथा उचित मूल्य उपलब्ध हों, तो जैव संवर्धित फसलें अतिरिक्त आर्थिक अवसर प्रदान कर सकती हैं। इनके आधार पर आटा, दलिया, रेडी-टू-कुक खाद्य उत्पाद, स्नैक्स और अन्य मूल्यवर्धित उत्पाद विकसित किये जा सकते हैं। इस प्रकार 'खेत से थाली तक' एक नया पोषण आधारित कृषि बाजार विकसित किया जा सकता है।

हालांकि, जैव संवर्धित फसलों की सफलता केवल नई किस्में विकसित करने से सुनिश्चित नहीं होगी। किसानों तक प्रमाणित बीज और वैज्ञानिक जानकारी पहुंचाना, उत्पादन तकनीक के बारे में प्रशिक्षण देना और उपज के लिए बाजार उपलब्ध करवाना भी आवश्यक है। उपभोक्ताओं में जागरूकता पैदा करना भी जरूरी है, ताकि वे पोषण सम्पन्न खाद्य उत्पादों के महत्व को समझें और उनकी मांग बढ़े।

जलवायु परिवर्तन के दौर में जैव संवर्धन को जलवायु-स्मार्ट कृषि से जोड़ना भी आवश्यक है। ऐसी किस्मों का विकास और प्रसार होना चाहिए जो पौष्टिक होने के साथ ही सूखा, गर्मी, लवणता और अन्य प्रतिकूल परिस्थितियों को सहन कर सकें। आगामी समय में कृषि नीति और अनुसंधान का लक्ष्य स्पष्ट होना चाहिए-उत्पादन, पोषण, आय और पर्यावरणीय संतुलन जैसे विषय इसमें शामिल हों।

आज आवश्यकता ऐसी कृषि व्यवस्था की है, जो खेतों को केवल अन्न का स्रोत न बनाए, बल्कि स्वस्थ समाज की आधारशिला भी बने। जैव संवर्धित फसलें इसी दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। यदि वैज्ञानिक नवाचार को किसान की जरूरत, बाजार की मांग और उपभोक्ता की पोषण आवश्यकता से जोड़ा जाए, तो ये फसलें भारत की खाद्य एवं पोषण सुरक्षा को नई मजबूती दे सकती हैं। भविष्य की खेती की आधार 'अधिक पोषण, बेहतर स्वास्थ्य और समृद्ध किसान' होना चाहिए।

अनुराधा

(अनुराधा अग्रवाल)

देसी गोवंश आधारित लाभकारी डेरी व्यवसाय

महेन्द्र सिंह[1], **गुंजन सनाढ्य**[2], **रिशिका चौधरी**[3], **घनश्याम मीणा**[4] और **राकेश कुमार**[5]

डेरी व्यवसाय ग्रामीण क्षेत्रों में पोषण सुरक्षा, रोजगार सृजन, गरीबी उन्मूलन और आर्थिक समृद्धि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। भारत में उपलब्ध विशाल पशुधन संपदा तथा उन्नत पशुपालन प्रौद्योगिकियों के प्रभावी उपयोग से डेरी क्षेत्र किसानों की आय बढ़ाने और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने का सशक्त माध्यम बन सकता है। वर्तमान में दुग्ध उत्पादन, प्रसंस्करण और मूल्य संवर्धन से जुड़ी गतिविधियों में महिलाओं एवं युवाओं की भागीदारी निरंतर बढ़ रही है। ऐसे में उन्हें सफल डेरी उद्यमी के रूप में विकसित करने के लिए तकनीकी ज्ञान, कौशल विकास, प्रशिक्षण और उद्यमिता संबंधी मार्गदर्शन प्रदान करना आवश्यक है। इस दिशा में कृषि विज्ञान केंद्रों, डेरी अनुसंधान संस्थानों, कृषि विश्वविद्यालयों तथा पशुपालन विभागों की सक्रिय एवं समन्वित भूमिका डेरी उद्यमिता को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकती है।

देश की अर्थव्यवस्था में पशुपालन का महत्वपूर्ण स्थान है। विभिन्न हितधारकों के प्रयासों तथा सरकार की किसान केंद्रित योजनाओं के परिणामस्वरूप पिछले एक दशक में भारतीय पशुधन क्षेत्र ने महत्वपूर्ण प्रगति की है। कृषि एवं संबद्ध क्षेत्रों के सकल मूल्यवर्धन में पशुधन क्षेत्र का योगदान वर्ष 2014-15 में 24.38 प्रतिशत था, जो वर्ष 2024-25 में बढ़कर लगभग 30 प्रतिशत हो गया। यह वृद्धि देश की कृषि एवं ग्रामीण अर्थव्यवस्था में पशुपालन के बढ़ते महत्व को दर्शाती है।

दुग्ध उत्पादन

हमारे देश में विश्व की विशाल गोवंश एवं भैंस आबादी उपलब्ध है। पशु प्रजनन, संतुलित पशु पोषण, पशु स्वास्थ्य प्रबंधन और स्वच्छ दुग्ध उत्पादन जैसी उन्नत प्रौद्योगिकियों को अपनाकर डेरी क्षेत्र को अधिक उत्पादक एवं लाभप्रद बनाया जा सकता है। इससे किसानों की आय बढ़ाने के साथ-साथ ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार एवं उद्यमिता के नए अवसर सृजित किए जा सकते हैं।

वर्ष 2024-25 में देश का दुग्ध उत्पादन 247.87 मिलियन टन रहा, जबकि वर्ष 2014-15 में यह 146.31 मिलियन टन था। इस प्रकार एक दशक में दुग्ध उत्पादन में उत्साहजनक वृद्धि दर्ज की गई है। इसी अवधि में प्रति व्यक्ति दूध की उपलब्धता भी 319 ग्राम प्रतिदिन से बढ़कर 485 ग्राम प्रतिदिन हो गई है, जो देश में डेरी क्षेत्र की निरंतर प्रगति को दर्शाती है।

[1]प्राध्यापक, पशुपालन एवं निदेशक प्रसार शिक्षा; [4]प्राध्यापक (पशुपालन), कृषि विश्वविद्यालय, कोटा; [2]विषय वस्तु विशेषज्ञ (गृह विज्ञान); [3]विषय वस्तु विशेषज्ञ (बागवानी), केवीके, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान); [5]प्रधान वैज्ञानिक, सस्य विज्ञान, भाकृअनुप, नई दिल्ली-110012

देसी गोपशु

देश में देसी गाय की लगभग 50 नस्लें पाई जाती हैं। इनमें गिर, साहीवाल, थारपारकर, रेड सिंधी और राठी प्रमुख दुधारू नस्लें हैं। देसी गोवंश कम गुणवत्ता वाले चारे का बेहतर उपयोग करने, रोगों से अपेक्षाकृत अधिक प्रतिरोधक क्षमता तथा स्थानीय जलवायु परिस्थितियों के अनुकूलन के लिए जाना जाता है। वर्तमान में देसी गायों की औसत दुग्ध उत्पादकता लगभग 4.17 कि.ग्रा. प्रति पशु प्रतिदिन है। हालांकि, उन्नत प्रबंधन, संतुलित पोषण एवं बेहतर स्वास्थ्य देखभाल के माध्यम से अधिक दुग्ध उत्पादन क्षमता वाली देसी गायों से प्रतिदिन 15-20 लीटर तक दूध प्राप्त किया जा सकता है।

भाकृअनुप द्वारा देसी गोवंश नस्लों के संरक्षण, संवर्धन और इनके व्यावसायिक पालन को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से कृषि विज्ञान केंद्रों पर देसी नस्लों की मॉडल डेरी इकाइयां स्थापित की गई हैं। इसी क्रम में कृषि विज्ञान केंद्र, कोटा में गिर नस्ल की मॉडल डेरी इकाई के माध्यम से किसानों एवं अन्य हितधारकों को डेरी उद्यमिता और कौशल विकास संबंधी प्रशिक्षण प्रदान किए जा रहे हैं। केंद्र की डेरी इकाई में कई गिर गायें प्रतिदिन लगभग 20 लीटर तक दूध दे रही हैं। यहां उचित प्रबंधन के फलस्वरूप प्रथम ब्यांत की आयु 30-36 माह तथा दो ब्यांत के बीच का अंतराल 13-15 माह दर्ज किया गया है।

सारणी: 10 गिर गायों की डेरी इकाई का आर्थिक विश्लेषण

विवरण	अनुमानित राशि/ उत्पादन
स्थापना लागत (पशु, शेड, उपकरण आदि)	15.00 लाख रुपये
औसत वार्षिक दूध उत्पादन	20,000 लीटर
दूध का विक्रय मूल्य	70 रुपये प्रति लीटर
वार्षिक सकल आय	14.00 लाख रुपये
वार्षिक सकल लागत	9.50 लाख रुपये
वार्षिक शुद्ध आय	4.50 लाख रुपये
लाभ-लागत अनुपात	1.47

सफलता

कृषि विज्ञान केंद्र, कोटा से प्रशिक्षण एवं तकनीकी सहयोग प्राप्त कर कोटा जिले के बालिता गांव की श्रीमती ललिता चौधरी ने देसी गिर एवं संकर नस्ल की गायों के साथ डेरी व्यवसाय की शुरुआत की। वर्तमान में इनके पास औसतन 10 गिर एवं 30 संकर नस्ल की दुधारू गायें हैं। पिछले पांच वर्षों के दौरान दूध की बिक्री से इन्हें औसतन लगभग 2 लाख रुपये प्रतिमाह की आय प्राप्त हो रही है। इनकी डेरी इकाई में वार्षिक दूध उत्पादन लगभग 1.25-1.50 लाख लीटर है, जिससे 80-95 लाख रुपये की सकल आय प्राप्त होती है। इस पर 58-68 लाख रुपये की सकल लागत आती है तथा 22-28 लाख रुपये की शुद्ध आय प्राप्त होती है। डेरी इकाई का लाभ-लागत अनुपात 1.37-1.40 है।

दुधारू पशुओं का चयन

डेरी व्यवसाय की सफलता काफी हद तक दुधारू पशुओं की उत्पादन एवं प्रजनन क्षमता पर निर्भर करती है। डेरी इकाई के लिए स्थानीय जलवायु के अनुकूल, स्वस्थ और अधिक दुग्ध उत्पादन क्षमता वाले पशुओं का चयन करना चाहिए। देसी गोवंश आधारित डेरी के लिए गिर, साहीवाल, थारपारकर और राठी जैसी उन्नत दुधारू नस्लों का चयन किया जा सकता है। पशु खरीदते समय उसके दुग्ध उत्पादन, ब्यांत संख्या, स्वास्थ्य, थन की बनावट और प्रजनन इतिहास की जानकारी अवश्य लेनी चाहिए।

पशु प्रजनन प्रबंधन

लाभकारी डेरी व्यवसाय के लिए पशुओं का कुशल प्रजनन प्रबंधन अत्यंत आवश्यक है। पशुपालक को प्रयास करना चाहिए कि गाय नियमित रूप से ब्याए और दो ब्यांत के बीच का अंतराल लगभग 13-15 माह रहे। मादा पशु में मदकाल के लक्षण दिखाई देने पर उचित समय पर श्रेष्ठ आनुवंशिक क्षमता वाले सांड के वीर्य से कृत्रिम गर्भाधान करवाना चाहिए। मादा बछड़ियों की संख्या बढ़ाने के उद्देश्य से लैंगिक वर्गीकृत वीर्य का उपयोग भी किया जा सकता है, जिससे मादा बछड़ी पैदा होने की संभावना सामान्य वीर्य की तुलना में काफी अधिक होती है।

गाय का शुष्क काल लगभग 2-3 माह रखना उपयुक्त माना जाता है तथा ब्याने के बाद

डेरी उद्यम

डेरी ऐसा व्यवसाय है, जिसे गांव, कस्बे और शहरों में अपेक्षाकृत कम पूंजी से शुरू किया जा सकता है। इसके लिए आवश्यक चारा-दाना, दुधारू पशु, बैंक ऋण जैसी वित्तीय सुविधाएं, दुग्ध विपणन के लिए सहकारी समितियों के दूध संग्रहण केंद्र तथा श्रम आदि संसाधन ग्रामीण स्तर पर ही उपलब्ध हो सकते हैं। इसलिए डेरी व्यवसाय ग्रामीण युवाओं एवं महिलाओं के लिए स्वरोजगार और नियमित आय का एक बेहतर विकल्प बन सकता है। डेरी व्यवसाय को लाभकारी बनाने के लिए दुधारू पशुओं का उचित चयन, प्रजनन प्रबंधन, नवजात बछड़ों की देखभाल, संतुलित पशु पोषण, उचित आवास, स्वास्थ्य प्रबंधन, स्वच्छ दुग्ध उत्पादन तथा दूध के प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन की वैज्ञानिक जानकारी और व्यावहारिक दक्षता आवश्यक है।

चरागाह में गिर नस्ल की देसी गायें

समय पर पुन प्रतिशत गर्भधारण सुनिश्चित करने के लिए संतुलित पोषण और उचित स्वास्थ्य प्रबंधन पर विशेष ध्यान देना चाहिए। डेरी इकाई की आर्थिक लाभप्रदता बनाए रखने के लिए अधिकांश दुधारू पशुओं का दुग्ध उत्पादन अवस्था में रहना आवश्यक है। देसी गायों में प्रथम ब्यांत की आयु लगभग 2.5-3 वर्ष रखने के लिए बछड़ियों को जन्म से ही संतुलित आहार, उचित स्वास्थ्य देखभाल और वैज्ञानिक प्रबंधन प्रदान करना चाहिए।

पोषण प्रबंधन

गायों की दुग्ध उत्पादन क्षमता उनके आनुवंशिक गुणों के साथ-साथ संतुलित आहार पर भी निर्भर करती है। संतुलित आहार में पशु के लिए आवश्यक सभी पोषक तत्व उचित मात्रा एवं अनुपात में उपलब्ध होने चाहिए। पशु आहार में ऊर्जा, प्रोटीन, खनिज लवण अथवा विटामिन में से किसी भी पोषक तत्व की कमी होने पर दुग्ध उत्पादन, प्रजनन क्षमता एवं बछड़ों की वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। पशुओं को सस्ता एवं संतुलित आहार देना चाहिए, जिसमें कम से कम 13-14 प्रतिशत पाचक प्रोटीन तथा 70-75 प्रतिशत कुल पाचनीय पोषक तत्व हों। साथ ही, पशुओं को प्रतिदिन 30-50 ग्राम खनिज मिश्रण तथा 20-30 ग्राम नमक दिया जाना चाहिए।

आवास प्रबंधन

डेरी व्यवसाय को लाभकारी बनाने के लिए पशुशाला का निर्माण वैज्ञानिक ढंग से किया जाना चाहिए, ताकि कम लागत में पशुओं को सर्दी, गर्मी और वर्षा से उचित सुरक्षा मिल सके। बाड़े में पर्याप्त छाया एवं वायु संचार के साथ पशुओं के लिए स्वच्छ पेयजल तथा चारा खिलाने हेतु पक्की नांद की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए।

महिलाओं की अहम भूमिका

डेरी कार्यबल में महिलाओं की भागीदारी लगभग 70 प्रतिशत है तथा डेरी सहकारी संस्थाओं के सदस्यों में लगभग 35 प्रतिशत महिलाएं हैं। विश्व दुग्ध दिवस 2026 की थीम भी डेरी क्षेत्र में महिलाओं के योगदान को समर्पित है। ग्रामीण महिलाएं पशुओं की देखभाल, दुग्ध दोहन और प्रबंधन संबंधी कार्यों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। डेरी व्यवसाय से उन्हें घर के निकट ही आय का स्रोत उपलब्ध होता है, जिससे वे आर्थिक रूप से सशक्त होती हैं। दुग्ध उत्पादन, प्रसंस्करण, मूल्य संवर्धन और डेरी उद्यमिता में भी महिलाओं की भागीदारी निरंतर बढ़ रही है।

डेरी उद्यमिता में महिलाओं की बड़ी भागीदारी

स्वास्थ्य प्रबंधन

अधिक एवं स्वच्छ दूध उत्पादन के लिए पशुओं का स्वस्थ रहना आवश्यक है। रोग होने के बाद उपचार करवाने की अपेक्षा रोगों से बचाव अधिक प्रभावी होता है। इसलिए पशुओं का निर्धारित समय पर टीकाकरण करवाया जाना चाहिए। खुरपका-मुंहपका (एफएमडी) और ब्रुसेलोसिस जैसे गंभीर रोगों की रोकथाम एवं नियंत्रण के लिए राष्ट्रीय पशु रोग नियंत्रण कार्यक्रम के अंतर्गत निर्धारित टीकाकरण अवश्य करवाएं।

स्वच्छ दूध उत्पादन

स्वच्छ दूध से तात्पर्य ऐसे दूध से है, जिसमें धूल, गोबर, बाल, हानिकारक सूक्ष्मजीव तथा एंटीबायोटिक एवं कीटनाशकों के अवशेष न हों। उपभोक्ताओं के स्वास्थ्य और निर्धारित गुणवत्ता मानकों को ध्यान में रखते हुए स्वच्छ एवं गुणवत्तायुक्त दूध का उत्पादन आवश्यक है। इसके लिए पशु, पशुशाला, दूध दुहने वाले व्यक्ति तथा दूध दुहने एवं संग्रह करने वाले बर्तनों की स्वच्छता का विशेष ध्यान रखना चाहिए। स्वच्छ दूध उत्पादन की उचित तकनीकों को अपनाने से दूध की गुणवत्ता बनाए रखने के साथ-साथ उसे सुरक्षित रूप से दूध संग्रह केंद्र तक पहुंचाने और गुणवत्तायुक्त दुग्ध उत्पाद तैयार करने में सहायता मिलती है।

दुग्ध प्रसंस्करण

भारत में दुग्ध प्रसंस्करण क्षेत्र में व्यापक संभावनाएं हैं। बढ़ती आय, बदलती उपभोग प्रवृत्तियों और स्वास्थ्यवर्धक खाद्य उत्पादों की बढ़ती मांग ने इस क्षेत्र को नई दिशा दी है। वर्तमान में डेरी व्यवसाय केवल दूध की बिक्री तक सीमित नहीं है। पनीर, घी, मक्खन, आइसक्रीम, दही, श्रीखंड और स्वादयुक्त दूध जैसे मूल्य संवर्धित दुग्ध उत्पादों के उत्पादन से डेरी उद्यमी अतिरिक्त आय प्राप्त कर सकते हैं।

नवजात बछड़ों की देखभाल

किसी भी डेरी की सफलता के लिए अच्छे आनुवंशिक गुणों वाले पशुओं का होना आवश्यक है। अधिकांश पशुपालक बछड़ों/बछड़ियों की उचित देखभाल नहीं करते और यह भूल जाते हैं कि आज के बछड़े/बछड़ियां ही भविष्य के सांड/गाय होंगे। प्रायः देखा गया है कि 15-20 प्रतिशत बछड़ों की मृत्यु जन्म के 7-8 सप्ताह के भीतर हो जाती है। बछड़ों की मृत्यु के कई कारण हो सकते हैं, परंतु उचित देखभाल एवं प्रबंधन द्वारा मृत्यु दर को काफी कम किया जा सकता है।

गोबर से समृद्धि

पशुओं का गोबर केवल अपशिष्ट नहीं, बल्कि ऊर्जा और जैविक खाद का महत्वपूर्ण स्रोत है। 'गोबरधन' पहल के अंतर्गत गोबर एवं अन्य जैविक अपशिष्ट से बायोगैस और बायो-सीएनजी उत्पादन को प्रोत्साहित किया जा रहा है। गोबर से प्राप्त बायोगैस का उपयोग स्वच्छ ईंधन के रूप में किया जा सकता है। वहीं, गैस उत्पादन के बाद बची स्लरी पोषक तत्वों से युक्त जैविक खाद के रूप में उपयोगी होती है।

डेरी व्यवसाय ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने, किसानों की आय बढ़ाने, रोजगार सृजन और महिला सशक्तिकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। उन्नत नस्लों, संतुलित पशु पोषण, बेहतर स्वास्थ्य प्रबंधन, आधुनिक तकनीकों, दुग्ध प्रसंस्करण एवं संगठित विपणन को अपनाकर डेरी व्यवसाय को अधिक लाभकारी और टिकाऊ बनाया जा सकता है।

पशुधन स्वास्थ्य में लाभकारी इन्फ्रारेड थर्मल इमेजिंग तकनीक

सोहनवीर सिंह

"इन्फ्रारेड थर्मल इमेजिंग पशुओं में समय पर तनाव एवं रोगों की पहचान और निगरानी के लिए एक उपयोगी तकनीक है। यह तकनीक पारंपरिक नैदानिक विधियों की तुलना में काफी लाभकारी है, जिसके उपयोग से समय पर पशु कल्याण में सुधार सुनिश्चित किया जा सकता है। यह उपकरण इस सिद्धांत पर कार्य करता है, जिसके अनुसार पशु के शरीर द्वारा उत्पन्न इन्फ्रारेड विकिरण को कैप्चर और विश्लेषित किया जाता है, जो पशुओं की भौतिक स्थिति, स्वास्थ्य स्थिति और थर्मल संतुलन से संबंधित होता है। इस तकनीक में उत्तेजना और रोग के प्रसार से संबंधित तापमान में होने वाले परिवर्तनों को जानने की क्षमता होती है। इस कारण थनैला, श्वसन रोग, लंगड़ापन और संक्रमण जैसे रोगों के समय पर होने वाले लक्षणों की पहचान हेतु यह एक महत्वपूर्ण तकनीक है। आने वाले समय में इस तकनीक के उपयोग से पशुधन प्रबंधन में इसकी व्यापक संभावनाएं हैं, जिससे रोग की समय पर पहचान सुनिश्चित करने और कृषि क्षेत्र में पशु स्वास्थ्य, कल्याण तथा अंततः उत्पादकता में सुधार करने में मदद मिलेगी।"

इन्फ्रारेड थर्मोग्राफी (इन्फ्रारेड थर्मल इमेजिंग) तकनीक का उपयोग पशु के सतही तापमान का मूल्यांकन करने के लिए प्रभावी रूप से किया जा सकता है। इसमें पशु की सतह से उत्सर्जित होने वाले इन्फ्रारेड विकिरण को एकत्र कर उसे विद्युत संकेतों में परिवर्तित किया जाता है और एक थर्मल छवि उत्पन्न की जाती है, जो शरीर की सतह पर तापमान के वितरण को दर्शाती है। थर्मल छवि को एक निर्धारित रंग स्केल के साथ प्रस्तुत किया जाता है, जिसमें प्रत्येक रंग एक विशिष्ट तापमान सीमा को दर्शाता है।

इन्फ्रारेड थर्मोग्राफी तकनीक का उपयोग करके पशु की सतह पर तापमान के वितरण को दृष्टिगत बनाना संभव हो जाता है। इससे पशु के शरीर की सतह पर रक्त प्रवाह में होने वाले परिवर्तनों की पहचान भी आसान हो जाती है, जो

प्रधान वैज्ञानिक, पशु शरीर क्रिया विज्ञान विभाग, भाकृअनुप-राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल-132001

उपयोगी तकनीक

- गैर-आक्रामक और सुरक्षित
- दक्षता में वृद्धि और श्रम की बचत
- स्वास्थ्य समस्याओं का शीघ्र पता लगाना
- समस्या का सटीक स्थानीयकरण
- लागत में बचत

विभिन्न स्थितियों, जैसे रोग और तनाव के सूचक हो सकते हैं। इन्फ्रारेड थर्मोग्राफी तकनीक के माध्यम से प्राप्त जानकारियां पशुओं के सामान्य स्वास्थ्य एवं कल्याण में मदद करती हैं।

थनैला रोग एवं थर्मल इमेजिंग

प्रारंभिक चरण में थनैला रोग का पता लगाने के लिए विभिन्न तकनीकों का उपयोग किया गया है, जैसे विद्युत चालकता, दूध का रंग और सोमैटिक सेल काउंट (एससीसी), लेकिन ये विधियां रोग की प्रारंभिक अवस्था में पहचान के लिए अपर्याप्त साबित हुई हैं। वर्तमान चुनौती थनैला रोग की प्रारंभिक अवस्था में पहचान करना है, ताकि शुष्क अवधि के दौरान, ब्यांत से पहले तथा गंभीर नैदानिक थनैला रोग की स्थिति में थन में होने वाली सूजन का समय पर पता लगाया जा सके।

थनैला रोग से प्रभावित थनों का तापमान काफी बढ़ जाता है। उपनैदानिक थनैला रोग से प्रभावित थनों का औसत तापमान सामान्य शरीर के तापमान की तुलना में 2.0–3.0 डिग्री सेल्सियस अधिक हो जाता है, जबकि नैदानिक थनैला रोग से ग्रसित गायों के थन का तापमान 1.0–1.5 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ जाता है। थर्मल इमेजिंग और एससीसी का एक साथ उपयोग करके थनैला रोग का शीघ्र पता लगाया जा सकता है।

लंगड़ापन एवं थर्मल इमेजिंग

लंगड़ापन गाय, भैंस, भेड़ और शूकरों को समान रूप से प्रभावित करता है। यह स्थिति विभिन्न कारणों से उत्पन्न हो सकती है, जिसके लिए पशु चिकित्सा जांच की आवश्यकता होती है। लंगड़ापन आमतौर पर संक्रमण या चोट के कारण होता है।

थर्मल इमेजिंग कैमरे के उपयोग से बढ़े हुए स्थानीय तापमान का पता लगाकर इनकी पहचान की जा सकती है। जब पैर के रोग से प्रभावित पशुओं की तुलना स्वस्थ पशुओं से की गई, तो लंगड़े पशुओं के सभी क्षेत्रों में अधिक तापमान पाया गया। थर्मल इमेजिंग तकनीक का लाभ उठाकर पशुपालक लंगड़ापन के शुरुआती लक्षणों के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त कर सकते हैं, जिससे समय पर हस्तक्षेप और उपचार संभव हो सकता है।

खुरपका-मुंहपका (एफ.एम.डी.)

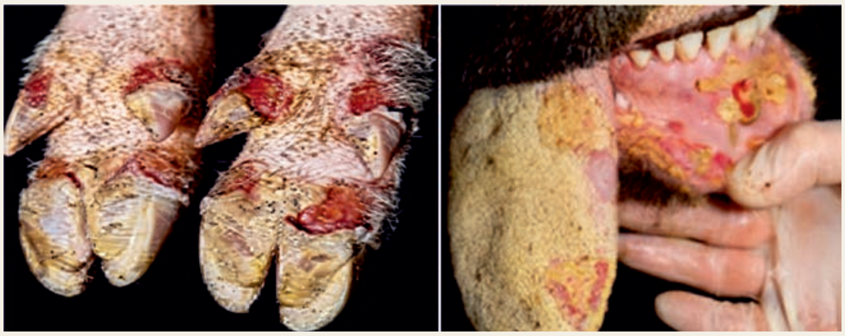

खुरपका-मुंहपका रोग का प्रभाव

इन्फ्रारेड थर्मल इमेजिंग तकनीक के माध्यम से संक्रमित पशुओं की शीघ्र पहचान से रोग के उपचार और रिकवरी में तेजी लाई जा सकती है। मवेशियों में इन्फ्रारेड थर्मल इमेजिंग का उपयोग कोरोनरी बैंड में तापमान वृद्धि की निगरानी के लिए भी किया गया है, जो वेसिकुलर घावों की उपस्थिति से 24-48 घंटे पहले एफ.एम.डी.वी.-संक्रमित मवेशियों में तापमान वृद्धि को दर्शाता है। हालांकि, कोरोनरी बैंड का बढ़ा हुआ तापमान अन्य सूजन संबंधी प्रक्रियाओं के कारण भी हो सकता है।

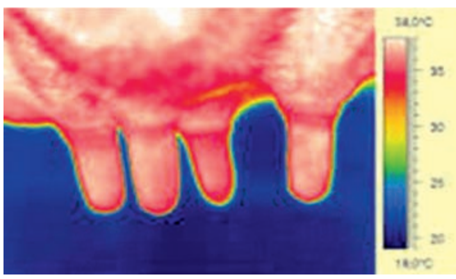

सामान्य थनों की थर्मल इमेजिंग

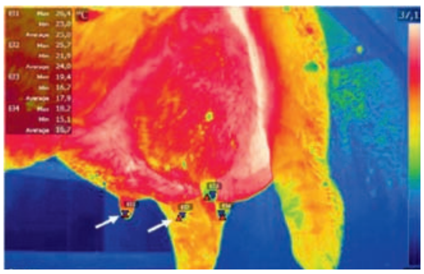

थनैला रोग से प्रभावित थनों की थर्मल इमेजिंग

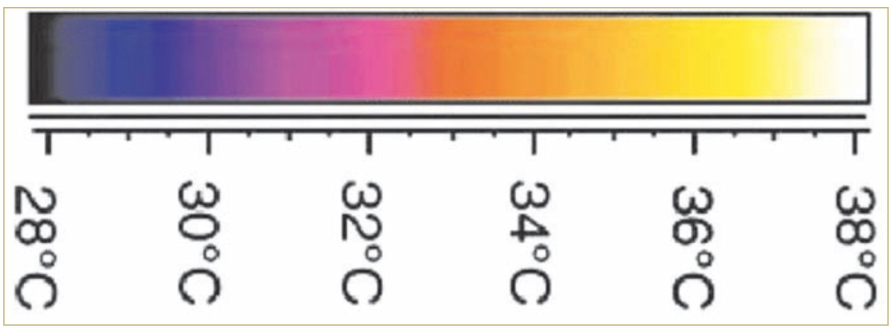

तापमान के आधार पर विभिन्न रंगों को दर्शाता इन्फ्रारेड थर्मोग्राफ स्केल

पशुधन में संक्रामक रोग में उपयोगी

थर्मल इमेजिंग के उपयोग से रोग की शुरुआत से 4-6 दिन पहले ही नैदानिक लक्षणों का पता लगाया जा सकता है। इसी प्रकार, यह तकनीक भेड़ों में ब्लूटंग वायरस के निदान में प्रभावी साबित हुई है, जिससे हल्के बुखार से प्रभावित और सामान्य भेड़ों के बीच 85 प्रतिशत की सटीकता के साथ अंतर किया जा सका। इसके अलावा, पशुओं में कान के संक्रमण का पता लगाने के लिए भी थर्मल इमेजिंग का उपयोग किया गया है, जिसमें नैदानिक लक्षण उभरने से पहले संक्रमित और गैर-संक्रमित कानों के बीच तापमान में काफी अंतर देखा गया है।

बोवाइन वायरल डायरिया (बी.वी.डी.)

इन्फ्रारेड थर्मल इमेजिंग तकनीक द्वारा बछड़ों में संक्रमण के पहले दिन से ही बी.वी.डी. के अनुरूप शरीर के तापमान में होने वाले बदलावों की पहचान की जा सकती है। तापमान में वृद्धि रोग के फैलने का सबसे विश्वसनीय संकेतक साबित हुई है।

बोवाइन रेस्पिरेटरी डिजीज कॉम्प्लेक्स (बी.आर.डी.सी.)

सफल उपचार रोग की शीघ्र पहचान पर निर्भर करता है। इस संबंध में, आंखों की इन्फ्रारेड थर्मल इमेजिंग के माध्यम से मवेशियों में नैदानिक लक्षण प्रकट होने से कई दिन पहले बी.आर.डी.सी. की पहचान की जा सकती है। यह उपकरण गुदा तापमान

और रक्त परीक्षण जैसे तरीकों की तुलना में काफी प्रभावी है। बाड़े में लगाए गए इन्फ्रारेड थर्मल इमेजिंग कैमरे स्वचालित रूप से सक्रिय रहते हैं।

इस नई प्रणाली के दो प्रमुख फायदे हैं। सबसे पहले, यह उत्पादकों और पशु चिकित्सकों को रोग के शुरुआती चरण में बी.आर.डी.सी. से प्रभावित मवेशियों को तेजी से अलग करने और उनका उपचार करने में सक्षम बनाती है, जिससे उपचार की सफलता की संभावना काफी बढ़ जाती है। दूसरा, शीघ्र पहचान और उपचार से झुंड के भीतर रोग के संचरण को प्रभावी ढंग से कम किया जा सकता है और इसके आगे फैलाव को रोका जा सकता है। इन्फ्रारेड थर्मल इमेजिंग और आर.एफ.आई.डी. प्रौद्योगिकी का समावेश बी.आर.डी.सी. प्रबंधन में एक महत्वपूर्ण प्रगति है।

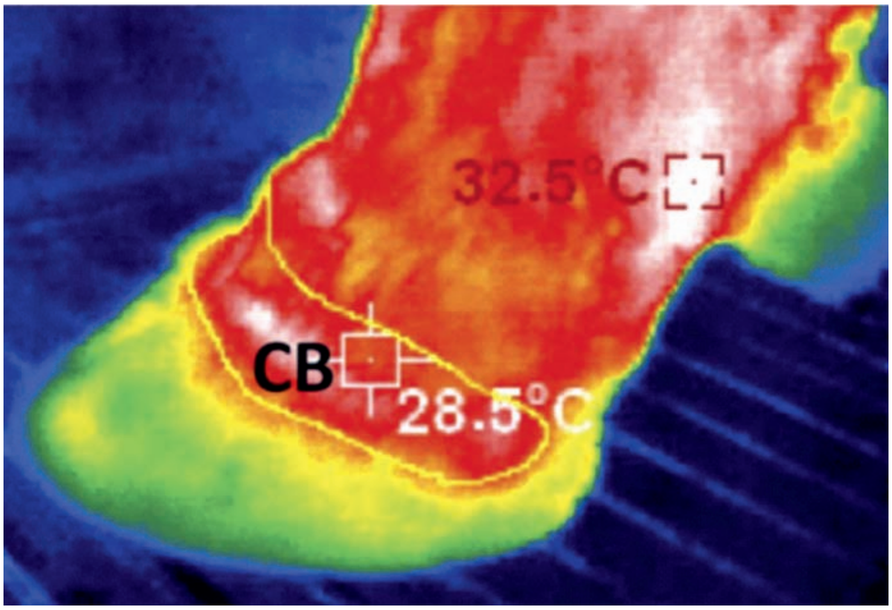

गोपशु के स्वस्थ पैर की थर्मल इमेज

पशुधन में रेबीज, तपेदिक और नीली जीभ

हाल के अध्ययनों में इन रोगों की पहचान और प्रबंधन में सहायता के लिए इन्फ्रारेड थर्मोग्राफी ने एक महत्वपूर्ण उपकरण के रूप में अपनी जगह बनाई है। रेबीज के मामले में, रोग के संक्रामक चरण में रैकून की पहचान करने के लिए इन्फ्रारेड थर्मल इमेजिंग का उपयोग किया गया है।

रेबीज के शुरुआती चरणों में असामान्य रूप से बढ़े हुए नाक के तापमान की पहचान करने की इन्फ्रारेड थर्मल इमेजिंग की क्षमता संभावित रूप से संक्रमित पशुओं की पहचान करने में मदद कर सकती है। इससे वायरल संचरण के जोखिम को कम करने के लिए समय पर प्रबंधन किया जा सकता है।

इन निष्कर्षों से पता चलता है कि इन्फ्रारेड थर्मल इमेजिंग पारंपरिक परीक्षण विधियों का पूरक बन सकती है, जिससे पशुओं में तपेदिक की स्क्रीनिंग प्रक्रिया को अधिक प्रभावी बनाया जा सकता है।

सीमाएं

हालांकि, इन्फ्रारेड थर्मल इमेजिंग तकनीक की कुछ सीमाएं भी हैं। उपकरण की लागत और विशेषज्ञता की आवश्यकता, पर्यावरणीय कारकों का प्रभाव, तापमान परिवर्तन के अप्रत्यक्ष कारण तथा सीमित अनुप्रयोग इसके प्रमुख सीमित कारक हैं। इसलिए, सटीक निदान के लिए इसे अन्य नैदानिक विधियों के साथ उपयोग करना अधिक प्रभावी माना जाता है।

इन्फ्रारेड थर्मल इमेजिंग पशु स्वास्थ्य और कल्याण की निगरानी के लिए एक अभूतपूर्व तकनीक है। सार्थक और सटीक परिणाम सुनिश्चित करने के लिए रोगग्रस्त और सामान्य पशुओं के बीच स्पष्ट अंतर स्थापित करना महत्वपूर्ण है। यह अंतर तुलना के लिए एक संदर्भ प्रदान करेगा, जिससे स्वास्थ्य समस्याओं से जुड़े असामान्य तापमान स्वरूप की पहचान की जा सकेगी। इसके अतिरिक्त, नस्ल और उम्र को भी ध्यान में रखना आवश्यक है। ये पशुओं के बीच तापमान में होने वाली भिन्नता को प्रभावित कर सकते हैं।

इन कारकों को ध्यान में रखते हुए थर्मल इमेजिंग तकनीक को प्रभावी ढंग से लागू करके किसान पशुओं से संबंधित स्वास्थ्य समस्याओं का जल्द पता लगाकर समय पर आवश्यक उपाय कर सकते हैं, जिससे पशु कल्याण में सुधार, उत्पादकता में वृद्धि और अंततः कृषि व्यवसाय में अधिक लाभप्रदता सुनिश्चित की जा सकती है। ■

पशु उत्पादन एवं इन्फ्रारेड थर्मल इमेजिंग

इन्फ्रारेड इमेजिंग तकनीक प्राकृतिक और रोग संबंधी शारीरिक स्थितियों के बीच तापमान में होने वाले अंतर के साथ-साथ पशु के शरीर की सतह और मुख्य शारीरिक क्षेत्रों के बीच तापमान में होने वाले उतार-चढ़ाव को आसानी से प्रदर्शित कर सकती है। इस यंत्र की क्षमता शीघ्र निदान और इसके निम्न मूल्यवान अनुप्रयोगों के आधार में शामिल हैं:

- पशुओं की सतह और प्रमुख शारीरिक क्षेत्रों में तापमान के उतार-चढ़ाव का पता लगाना।
- पशुओं में रोगों, तनाव और सूजन का शीघ्र निदान करना।
- पशुओं में मद, अंडोत्सर्जन और गर्भावस्था की शीघ्र पहचान करना।
- बेहतर स्वास्थ्य निगरानी के माध्यम से पशु कल्याण को सुगम करना।

निवेदन

लेखक बंधु *खेती* पत्रिका के लिए अपने लेख और संबंधित फोटो, कवरिंग लैटर के साथ सिर्फ निम्न पोर्टल पर ही अपने मोबाइल नम्बर के साथ भेजें। ध्यान रखें कि फोटो जेपीजे फॉर्मेट में और उच्च रेज्योल्यूशन की हों। लेख में अधिकतम 1200 शब्दों की संख्या रखने का प्रयास करें। इसके अतिरिक्त सुझाव और प्रतिक्रियाएं भी भेज सकते हैं।

हमारा पोर्टल है : epatrika.icar.org.in

–संपादक

बकरियों के मेमनों का वैज्ञानिक प्रबंधन

चन्दा सिंह[1] और **प्रतीक्षा पांडा**[2]

" भारतीय अर्थव्यवस्था में बकरी पालन एक महत्वपूर्ण कृषि आधारित उद्यम है, जो विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार, आय एवं पोषण सुरक्षा का सशक्त माध्यम है। इस व्यवसाय की सफलता काफी हद तक मेमनों के वैज्ञानिक प्रबंधन पर निर्भर करती है, क्योंकि यही आगे चलकर उत्पादक पशु बनते हैं। जन्म के समय मेमने अत्यंत संवेदनशील होते हैं और उन्हें विशेष देखभाल, संतुलित पोषण तथा स्वच्छ वातावरण की आवश्यकता होती है। उचित प्रबंधन के अभाव में नवजात मेमनों की मृत्यु दर 30-40 प्रतिशत तक हो सकती है, जिससे पशुपालकों को आर्थिक हानि उठानी पड़ती है। मेमनों का वैज्ञानिक पालन-पोषण उनकी स्वस्थ वृद्धि, रोग प्रतिरोधक क्षमता एवं भविष्य की उत्पादकता सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जन्म के तुरंत बाद उचित पोषण, समय पर स्वास्थ्य देखभाल तथा अनुकूल प्रबंधन अपनाने से उनकी जीवित रहने की क्षमता बढ़ती है, विकास बेहतर होता है तथा पोषण संबंधी समस्याओं से बचाव होता है। इस प्रकार वैज्ञानिक प्रबंधन अपनाकर न केवल मेमनों की मृत्यु दर कम की जा सकती है, बल्कि बकरी पालन की उत्पादकता एवं लाभप्रदता में भी काफी वृद्धि की जा सकती है। "

नवजात मेमनों का प्रारंभिक प्रबंधन उनके जीवित रहने एवं स्वस्थ विकास के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। जन्म के तुरंत बाद मेमने की नाक एवं मुंह को अच्छी तरह साफ करें, ताकि श्वसन मार्ग अवरुद्ध न हो। शरीर पर लगी झिल्ली को सूती कपड़े से रगड़कर हटाने से शरीर शीघ्र सूखता है तथा रक्त संचार सामान्य होता है। आवश्यकता होने पर मेमने को कुछ सेकंड के लिए पिछले पैरों से पकड़कर सिर नीचे की ओर रखा जा सकता है। इससे श्वास नली में मौजूद तरल पदार्थ बाहर निकल जाता है। सामान्यत: स्वस्थ मेमना जन्म के लगभग आधे घंटे के भीतर खड़ा होकर चलना प्रारंभ कर देता है।

गर्भनाल की उचित देखभाल संक्रमण से बचाव के लिए आवश्यक है। इसके लिए गर्भनाल के सिरे को टिंचर आयोडीन में डुबोएं तथा 12 घंटे बाद यह प्रक्रिया पुन: दोहराएं। नवजात मेमनों एवं उनकी माताओं के लिए स्वच्छ, सूखा एवं सुरक्षित स्थान उपलब्ध करवाना चाहिए। जन्म के बाद के पहले दो महीने अत्यंत संवेदनशील होते हैं, इसलिए इस अवधि में विशेष निगरानी एवं देखभाल आवश्यक है।

[1]एम.वी.एस.सी. छात्रा; [2]सहायक प्राध्यापक, पशु चिकित्सा एवं पशुपालन प्रसार शिक्षा विभाग, उत्तर प्रदेश पंडित दीनदयाल उपाध्याय पशु चिकित्सा विज्ञान विश्वविद्यालय एवं गौ अनुसंधान संस्थान, मथुरा-281001

कोलोस्ट्रम एवं आहार प्रबंधन

जन्म के 30 मिनट के भीतर मेमने को कोलोस्ट्रम (खीस) अवश्य देना चाहिए। यह मां का पहला दूध होता है, जिसमें प्रचुर मात्रा में एंटीबॉडी होती हैं, जो मेमने को प्रारंभिक संक्रमणों से बचाकर उसकी प्रतिरक्षा क्षमता विकसित करती हैं। यदि मेमना स्वयं दूध न पी सके, तो उसे धीरे-धीरे दूध पिलाना चाहिए। पहले तीन दिनों तक लगभग 300 मि.ली. कोलोस्ट्रम दिन में तीन बार देना चाहिए।

चौथे दिन से दो सप्ताह की आयु तक लगभग 350 मि.ली. दूध दिन में तीन बार पिलाना चाहिए। 15 दिनों की आयु से ठोस आहार एवं हरा चारा थोड़ी-थोड़ी मात्रा में देना प्रारंभ करें, ताकि मेमनों का पाचन तंत्र ठोस आहार के अनुकूल हो सके। एक से तीन महीने की आयु तक प्रतिदिन 50-100 ग्राम ठोस आहार दें, जिसमें लगभग 22 प्रतिशत प्रोटीन होना चाहिए। संतुलित पोषण मेमनों की तीव्र वृद्धि, बेहतर स्वास्थ्य एवं भविष्य की उत्पादकता के लिए आवश्यक है।

पोषण प्रबंधन एवं वृद्धि

मेमनों की आयु बढ़ने के साथ उनके आहार में क्रमिक परिवर्तन करना आवश्यक है, जिससे जुगाली करने वाले अंगों का समुचित विकास हो सके। संतुलित आहार में कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा, विटामिन एवं खनिजों का उचित अनुपात होना चाहिए। प्रारंभिक सप्ताहों में शुष्क आहार का सेवन शरीर भार का लगभग 15-20 प्रतिशत, क्रूड प्रोटीन 18-20 प्रतिशत तथा कुल पाच्य पोषक तत्व 75-80 प्रतिशत होना चाहिए। साथ ही, कैल्शियम एवं फॉस्फोरस की पर्याप्त मात्रा भी आवश्यक है।

तीन से आठ सप्ताह की आयु में आहार में 16-18 प्रतिशत तथा 9 से 12 सप्ताह की

सारणी 1. मेमनों हेतु ठोस आहार का मिश्रण

घटक	**मात्रा (प्रतिशत)**
मक्का	40
मूंगफली की खली	30
गेहूं का चोकर	10
तेल रहित चावल का चोकर	13
गुड़	5
खनिज मिश्रण	2
नमक, विटामिन ए, बी$_2$, डी$_3$ एवं एंटीबायोटिक सप्लीमेंट	1

यह संतुलित ठोस आहार मेमनों की तीव्र वृद्धि, बेहतर स्वास्थ्य एवं प्रारंभिक विकास के लिए उपयुक्त रहता है।

दूध छुड़ाने का प्रबंधन

दूध छुड़ाना मेमनों को दूध आधारित आहार से ठोस आहार पर लाने की महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। यह कार्य धीरे-धीरे करना चाहिए, ताकि मेमने बिना तनाव के नए आहार के अनुकूल हो सकें। इसके लिए दूध की मात्रा क्रमशः कम करते हुए ठोस आहार की मात्रा बढ़ानी चाहिए। इस अवधि में उच्च गुणवत्ता वाला, संतुलित एवं सुपाच्य ठोस आहार देना आवश्यक है, जिससे उनकी पोषण संबंधी आवश्यकताएं पूरी होती रहें। दूध छुड़ाने के दौरान मेमनों के आहार सेवन, शरीर भार एवं स्वास्थ्य की नियमित निगरानी करनी चाहिए। उचित प्रबंधन से मेमने शीघ्र ही ठोस आहार के अभ्यस्त हो जाते हैं, उनका विकास प्रभावित नहीं होता तथा तनाव कम होने के साथ उनकी वृद्धि एवं भविष्य की उत्पादकता बेहतर बनी रहती है।

आयु में 14-16 प्रतिशत प्रोटीन पर्याप्त रहता है। मेमनों को हर समय स्वच्छ एवं ताजा पेयजल उपलब्ध करवाना चाहिए, क्योंकि यह पाचन, शरीर में द्रव संतुलन तथा समुचित वृद्धि के लिए अत्यंत आवश्यक है।

स्वास्थ्य देखभाल एवं रोग प्रतिरोध

मेमनों के स्वस्थ विकास एवं रोगों की रोकथाम के लिए नियमित स्वास्थ्य प्रबंधन आवश्यक है। समय पर टीकाकरण एवं कृमिनाशन अपनाने से उनकी रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है तथा मृत्यु दर में कमी आती है।

प्रभावित क्षेत्रों में बिसहरिया (एंथ्रेक्स) एवं रक्तस्रावी सेप्टिसीमिया का टीका छह माह की आयु में लगाकर प्रतिवर्ष दोहराना चाहिए। आंत विषाक्तता (एंटरोटॉक्सिमिया) का टीका, यदि गर्भावस्था के दौरान मादा बकरी का टीकाकरण न हुआ हो, तो मेमने को प्रथम सप्ताह में तथा अन्यथा चार माह की आयु में लगाना चाहिए।

पीपीआर (पेस्टे डेस पेटिट्स रुमिनेंट्स) का टीका तीन माह की आयु में लगाकर प्रत्येक तीन वर्ष में दोहराना चाहिए। खुरपका-मुंहपका रोग का टीका चार माह की आयु में लगाकर वर्ष में दो बार (मार्च एवं सितंबर) तथा बकरी चेचक का टीका तीन माह या उससे अधिक आयु के मेमनों को प्रतिवर्ष दिसंबर में लगाना चाहिए।

नियमित कृमिनाशन भी स्वास्थ्य प्रबंधन का महत्वपूर्ण भाग है। पहला कृमिनाशन दो से चार सप्ताह की आयु में करें तथा इसके बाद प्रत्येक चार से छह सप्ताह के अंतराल पर कम से कम 18 सप्ताह की आयु तक कुल 5 बार कृमिनाशन करवाना चाहिए। इससे आंतरिक परजीवियों का प्रभाव कम होता है तथा मेमनों की वृद्धि एवं स्वास्थ्य बेहतर बना रहता है।

इस प्रकार बकरी पालन में मेमनों का वैज्ञानिक प्रबंधन व्यवसाय की सफलता का महत्वपूर्ण आधार है। जन्म से ही उचित देखभाल, समय पर कोलोस्ट्रम पिलाना, संतुलित पोषण, स्वच्छ एवं सुरक्षित आवास, वैज्ञानिक ढंग से दूध छुड़ाना तथा नियमित टीकाकरण एवं कृमिनाशन अपनाने से मेमनों की मृत्यु दर में कमी आती है तथा उनकी वृद्धि एवं रोग प्रतिरोधक क्षमता में सुधार होता है।

इससे भविष्य में स्वस्थ एवं अधिक उत्पादक पशु तैयार होते हैं, जिससे बकरी पालन की उत्पादकता और लाभप्रदता दोनों बढ़ती हैं। अतः मेमनों का वैज्ञानिक एवं व्यवस्थित प्रबंधन अपनाकर पशुपालक अपने उद्यम को अधिक टिकाऊ, लाभकारी एवं आर्थिक रूप से सुदृढ़ बना सकते हैं। ■

सारणी 2. जन्म से 90 दिनों तक मेमनों का आहार प्रबंधन

मेमनों की आयु	**दूध (मि.ली.)**	**ठोस आहार (ग्राम)**	**हरा चारा**
1-3 दिन	कोलोस्ट्रम 300 (दिन में 3 बार)	-	-
4-14 दिन	350 (दिन में 3 बार)	-	-
15-30 दिन	350 (दिन में 3 बार)	थोड़ी मात्रा में	थोड़ी मात्रा में
31-60 दिन	400 (दिन में 2 बार)	100-150	इच्छानुसार
61-90 दिन	200 (दिन में 2 बार)	200-250	इच्छानुसार

सारणी 3. मेमनों में टीकाकरण की अनुसूची

रोग	**प्रथम टीकाकरण**	**पुनः टीकाकरण**
बिसहरिया (एंथ्रेक्स)	6 माह की आयु में	प्रभावित क्षेत्रों में वर्ष में एक बार
रक्तस्रावी सेप्टिसीमिया	6 माह की आयु में	प्रतिवर्ष बरसात से पहले
आंत विषाक्तता (एंटरोटॉक्सिमिया)	4 माह की आयु में (यदि माता का टीकाकरण हुआ हो)	प्रतिवर्ष बरसात से पहले (मई में)
	प्रथम सप्ताह में (यदि माता का टीकाकरण न हुआ हो)	15 दिनों बाद बूस्टर डोज
पीपीआर	3 माह की आयु में	प्रत्येक 3 वर्ष में एक बार
खुरपका-मुंहपका (एफएमडी)	4 माह की आयु में	वर्ष में दो बार (मार्च एवं सितंबर)
चेचक	3 माह या अधिक आयु में	प्रतिवर्ष (दिसंबर माह)

कृषक समृद्धि की दिशा में खेत बचाओ अभियान

शुभ्रांशु सिंह[1], **रोहन शेरावत**[1], **पुष्पेन्द्र यादव**[1], **अमन सिंह**[2] और **देवेश पाठक**[2]

‘खेत बचाओ अभियान’ सरकार द्वारा कृषि भूमि, मृदा स्वास्थ्य और जल संसाधनों के संरक्षण के उद्देश्य से शुरू की गई एक महत्वपूर्ण पहल है। कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है तथा देश की बड़ी जनसंख्या प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर करती है। वर्तमान समय में बढ़ते शहरीकरण, औद्योगिकीकरण, भूमि क्षरण, जलवायु परिवर्तन तथा प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन के कारण कृषि क्षेत्र अनेक चुनौतियों का सामना कर रहा है। इन चुनौतियों के समाधान के लिए ‘खेत बचाओ अभियान’ किसानों को जागरूक बनाने, टिकाऊ कृषि पद्धतियों को बढ़ावा देने तथा कृषि संसाधनों के संरक्षण की दिशा में कार्य करता है। इस अभियान की शुरुआत 1 जून 2026 को मध्य प्रदेश के रायसेन जिले से की गई और इसे पूरे देश में व्यापक स्तर पर संचालित किया गया। इस अभियान के अंतर्गत मृदा परीक्षण, जल संरक्षण, फसल विविधीकरण, प्राकृतिक खेती, संतुलित उर्वरक उपयोग तथा आधुनिक कृषि तकनीकों के प्रसार पर विशेष बल दिया गया। अभियान का उद्देश्य केवल कृषि भूमि को संरक्षित करना ही नहीं, बल्कि किसानों की आय में वृद्धि, खाद्य सुरक्षा को सुदृढ़ करना तथा पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखना भी है। इस अभियान को सुचारू रूप से किसानों, कृषि वैज्ञानिकों, कृषि विश्वविद्यालयों, कृषि विज्ञान केंद्रों, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद तथा सरकारी संस्थाओं के संयुक्त प्रयासों से संपन्न किया गया।

हमारे देश की बड़ी आबादी प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर करती है। किसानों की मेहनत और कृषि उत्पादन ही देश की खाद्य सुरक्षा का आधार है। किंतु वर्तमान समय में कृषि भूमि पर बढ़ते दबाव, शहरीकरण, औद्योगिकीकरण, जलवायु परिवर्तन, मृदा उर्वरता में कमी तथा प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन के कारण खेती का भविष्य कई चुनौतियों का सामना कर रहा है। ऐसी परिस्थितियों में कृषि भूमि, मृदा और जल संसाधनों के संरक्षण की आवश्यकता पहले से कहीं अधिक बढ़ गई है। इसी उद्देश्य

[1]कृषि विस्तार प्रभाग, भाकृअनुप, कृषि अनुसंधान भवन-I, पूसा, नई दिल्ली-110012; [2]आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या-224229 (उत्तर प्रदेश)

सारणी: खेत बचाओ अभियान के प्रमुख कार्य एवं लाभ

कार्य क्षेत्र	प्रमुख गतिविधियां	किसानों को लाभ
भूमि संरक्षण	मेड़बंदी, वृक्षारोपण	मृदा कटाव में कमी
मृदा स्वास्थ्य	मृदा परीक्षण, जैविक खाद	उर्वरता में वृद्धि
जल संरक्षण	ड्रिप सिंचाई, वर्षा जल संचयन	जल की बचत
फसल प्रबंधन	फसलचक्र, मिश्रित खेती	उत्पादन में स्थिरता
किसान प्रशिक्षण	शिविर एवं गोष्ठियां	ज्ञान एवं जागरूकता में वृद्धि
पर्यावरण संरक्षण	हरित आवरण बढ़ाना	जलवायु संतुलन
तकनीकी सहायता	आधुनिक कृषि तकनीक	लागत में कमी एवं लाभ में वृद्धि

प्राकृतिक खेती बनाए मृदा को स्वस्थ

प्राकृतिक खेती से कम लागत में बेहतर उत्पादन

को ध्यान में रखते हुए सरकार द्वारा 'खेत बचाओ अभियान' प्रारंभ किया गया।

यह अभियान किसानों को उनकी भूमि और प्राकृतिक संसाधनों के महत्व के प्रति जागरूक करने तथा टिकाऊ कृषि पद्धतियों को बढ़ावा देने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। यह केवल खेतों को बचाने का कार्यक्रम नहीं, बल्कि किसानों के भविष्य, ग्रामीण अर्थव्यवस्था और देश की खाद्य सुरक्षा को मजबूत बनाने का एक व्यापक प्रयास है।

इस अभियान की शुरुआत 1 जून 2026 को की गई तथा यह अभियान 1 जून से 30 जून 2026 तक देशव्यापी स्तर पर चलाया गया। अभियान के सफल संचालन में कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, कृषि विज्ञान केंद्र, कृषि विश्वविद्यालयों तथा राज्य कृषि विभागों की महत्वपूर्ण भूमिका रही।

अभियान के दौरान किसानों तक वैज्ञानिक कृषि तकनीकों, मृदा संरक्षण, जल प्रबंधन तथा सरकारी योजनाओं की जानकारी पहुंचाने का प्रयास किया गया। इसके माध्यम से किसानों को यह समझाया गया कि कृषि भूमि केवल वर्तमान की आय का स्रोत नहीं है, बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए एक बहुमूल्य संपत्ति भी है।

अभियान के उद्देश्य

'खेत बचाओ अभियान' का मुख्य उद्देश्य कृषि भूमि का संरक्षण करते हुए उसकी उत्पादकता और उर्वरता को बनाए रखना है। इसके अंतर्गत जल संरक्षण और कुशल सिंचाई को बढ़ावा देने के साथ किसानों को टिकाऊ कृषि पद्धतियों के प्रति जागरूक करना तथा कृषि भूमि के अनावश्यक गैर-कृषि उपयोग को रोकना शामिल है।

अभियान के माध्यम से किसानों को आधुनिक कृषि तकनीकों की जानकारी देकर कृषि उत्पादन और उनकी आय में वृद्धि करने पर भी जोर दिया जाता है। इसके साथ ही, खाद्य सुरक्षा को मजबूत करना, पर्यावरण संरक्षण को बढ़ावा देना और कृषि संसाधनों को भावी पीढ़ियों के लिए सुरक्षित रखना भी इस अभियान के प्रमुख उद्देश्यों में शामिल है।

कृषि भूमि किसी भी किसान की सबसे बड़ी पूंजी होती है। किसान का जीवन, उसकी आय और उसके परिवार का भविष्य खेतों पर निर्भर करता है। यदि कृषि भूमि का संरक्षण नहीं किया गया, तो आने वाले वर्षों में खाद्यान्न उत्पादन प्रभावित हो सकता है। 'खेत बचाओ अभियान' किसानों को भूमि संरक्षण के महत्व को समझाने का कार्य करता है।

यह अभियान कृषि उत्पादन बढ़ाने के साथ-साथ प्राकृतिक संसाधनों के संतुलित उपयोग पर भी जोर देता है। इसके माध्यम से किसानों को यह संदेश दिया जाता है कि

लाभ

'खेत बचाओ अभियान' के माध्यम से किसानों को अनेक प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष लाभ प्राप्त हो सकते हैं। भूमि और जल संरक्षण से कृषि उत्पादन में स्थिरता आती है, जबकि मृदा की उर्वरता बनाए रखने से फसलों की गुणवत्ता और उत्पादकता में सुधार होता है। जल संरक्षण तकनीकों के प्रयोग से सिंचाई लागत कम होने के साथ सीमित जल संसाधनों का बेहतर उपयोग संभव होता है। फसल विविधीकरण और आधुनिक कृषि तकनीकों को अपनाने से किसानों की आय में वृद्धि हो सकती है। इसके अतिरिक्त, पर्यावरण संरक्षण और जैव विविधता के संवर्धन में भी यह अभियान महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

कुशल जल प्रबंधन से बढ़ाएं उत्पादकता

सही परामर्श, बेहतर उत्पादन

वैज्ञानिक मार्गदर्शन से समृद्धि की दिशा

भूमि, जल और मृदा का संरक्षण ही कृषि की स्थिरता और समृद्धि का आधार है।

अभियान की प्रमुख गतिविधियां

अभियान के दौरान विभिन्न प्रकार की गतिविधियां आयोजित की गईं, जिनका उद्देश्य किसानों को जागरूक करना और उन्हें व्यावहारिक जानकारी प्रदान करना रहा:

- किसान जागरूकता शिविरों का आयोजन।
- मृदा परीक्षण कार्यक्रम।
- जल संरक्षण संबंधी प्रशिक्षण।
- फसल प्रबंधन पर किसान गोष्ठियां।
- प्राकृतिक एवं जैविक खेती का प्रचार।
- वृक्षारोपण अभियान।
- सरकारी कृषि योजनाओं की जानकारी।
- कृषि विशेषज्ञों द्वारा परामर्श सेवाएं।

इन कार्यक्रमों के माध्यम से किसानों को खेती से संबंधित समस्याओं के समाधान और नई तकनीकों के बारे में विस्तृत जानकारी दी गई।

भावी संभावनाएं

भविष्य में खेत बचाओ अभियान को और अधिक प्रभावी बनाने के लिए आधुनिक तकनीकों का उपयोग बढ़ाया जा सकता है। ड्रोन तकनीक, सटीक कृषि, डिजिटल भूमि रिकॉर्ड, कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित कृषि सलाह और जल प्रबंधन प्रणालियां इस अभियान को नई दिशा प्रदान कर सकती हैं। साथ ही ग्रामीण युवाओं को कृषि और प्राकृतिक संसाधन संरक्षण से जोड़ना भी आवश्यक है। यदि युवा वर्ग खेती को आधुनिक और लाभकारी व्यवसाय के रूप में अपनाएगा, तो कृषि क्षेत्र का सतत विकास सुनिश्चित किया जा सकेगा।

कृषक संदर्भ में उपयोगी अभियान

'खेत बचाओ अभियान' किसानों के लिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह सीधे उनकी आजीविका से जुड़ा हुआ है:

भूमि संरक्षण: भूमि सीमित संसाधन है। यदि कृषि भूमि का संरक्षण नहीं किया गया, तो खेती का क्षेत्र सिकुड़ता जाएगा। इसी दिशा में यह अभियान किसानों को भूमि की सुरक्षा और उसके उचित उपयोग के लिए प्रेरित करता है।

मृदा स्वास्थ्य: मृदा की गुणवत्ता कृषि उत्पादन का आधार है। अभियान के माध्यम से किसानों को मृदा परीक्षण, जैविक खाद और संतुलित उर्वरक उपयोग के बारे में जानकारी दी जाती है।

जल प्रबंधन: जल की कमी, कृषि क्षेत्र की सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक है। ड्रिप सिंचाई, स्प्रिंकलर प्रणाली और वर्षा जल संचयन जैसी तकनीकों को अपनाने पर विशेष बल दिया जाता है।

फसल विविधीकरण: एक ही फसल को लगातार उगाने से मृदा की उर्वरता कम हो सकती है। अभियान किसानों को फसलचक्र और विविधीकरण अपनाने के लिए प्रोत्साहित करता है।

आधुनिक तकनीकों का उपयोग: डिजिटल कृषि, मौसम आधारित सलाह, मृदा स्वास्थ्य कार्ड और आधुनिक कृषि उपकरणों का उपयोग किसानों को अधिक लाभकारी खेती की ओर अग्रसर करता है।

विशेष

वर्तमान समय में कृषि क्षेत्र अनेक चुनौतियों से जूझ रहा है। बढ़ती जनसंख्या और तेजी से हो रहे शहरी विस्तार के कारण कृषि भूमि का क्षेत्रफल लगातार घट रहा है। अनेक स्थानों पर उपजाऊ भूमि का उपयोग आवासीय और औद्योगिक परियोजनाओं के लिए किया जा रहा है। दूसरी ओर, रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के अत्यधिक उपयोग से मृदा की गुणवत्ता भी प्रभावित हो रही है। भूजल स्तर में कमी, अनियमित वर्षा और जलवायु परिवर्तन जैसी समस्याएं खेती को और अधिक चुनौतीपूर्ण बना रही हैं। यदि इन चुनौतियों का समय रहते समाधान नहीं किया गया, तो कृषि उत्पादन के साथ-साथ किसानों की आय भी प्रभावित हो सकती है। इन्हीं परिस्थितियों को देखते हुए खेत बचाओ अभियान को प्रभावी और आवश्यक पहल के रूप में अपनाना जरूरी है।

'खेत बचाओ अभियान' कृषि भूमि, मृदा और जल संसाधनों के संरक्षण की दिशा में एक महत्वपूर्ण राष्ट्रीय पहल है। यह अभियान किसानों को जागरूक बनाने, कृषि उत्पादन बढ़ाने, प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करने तथा खाद्य सुरक्षा को मजबूत बनाने का कार्य करता है।

वर्तमान समय में जब कृषि अनेक चुनौतियों का सामना कर रही है, तब खेत बचाओ अभियान की प्रासंगिकता और भी अधिक बढ़ जाती है। किसानों, वैज्ञानिकों, सरकारी संस्थाओं और समाज के सामूहिक प्रयासों से ही इस अभियान को सफल बनाया जा सकता है। खेतों की सुरक्षा ही किसानों की समृद्धि, ग्रामीण विकास और राष्ट्र की खाद्य सुरक्षा की गारंटी है।

मशरूम उत्पादन से बनी सफल उद्यमी

दिव्या कुमारी और **बी.सी. अनु**

"बिहार के उत्तरी क्षेत्र में स्थित मुजफ्फरपुर जिला अपनी कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था के लिए प्रसिद्ध है, जहां अधिकांश परिवार सीमांत एवं लघु कृषक श्रेणी से संबंधित हैं। इन किसानों की आजीविका मुख्यत: पारंपरिक खेती पर आधारित है, किंतु बढ़ती उत्पादन लागत, सीमित संसाधन तथा घटते लाभ के कारण कृषि आय लगातार चुनौतीपूर्ण होती जा रही है। ऐसी परिस्थितियों में वैकल्पिक कृषि आधारित उद्यम किसानों की आय वृद्धि एवं ग्रामीण आजीविका को सुदृढ़ करने के प्रभावी माध्यम के रूप में उभर रहे हैं। इसी क्रम में कुढ़नी प्रखंड के चन्द्रहट्टी गांव की श्रीमती निक्की कुमारी ने वैज्ञानिक मशरूम उत्पादन को अपनाकर आत्मनिर्भरता की प्रेरणादायक मिसाल प्रस्तुत की है। कृषि विज्ञान केंद्र, तुर्की से प्रशिक्षण प्राप्त करने के पश्चात इन्होंने वैज्ञानिक पद्धतियों के आधार पर मशरूम उत्पादन कार्य प्रारंभ किया और धीरे-धीरे इसे एक संगठित एवं लाभकारी उद्यम के रूप में विकसित किया। आज इनका यह प्रयास न केवल इनके परिवार की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ कर रहा है, बल्कि क्षेत्र की अन्य ग्रामीण महिलाओं को भी स्वरोजगार एवं उद्यमिता की दिशा में प्रेरित कर रहा है।"

ग्रामीण परिवेश में सीमित कृषि संसाधनों के बीच जीवनयापन करने वाले अधिकांश परिवारों की तरह श्रीमती निक्की कुमारी का परिवार भी पारंपरिक खेती पर निर्भर था। लगभग 1 एकड़ भूमि पर धान, गेहूं एवं मक्का जैसी फसलों की खेती से परिवार की दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति तो हो जाती थी, किंतु अतिरिक्त आय अथवा बचत का कोई स्थायी स्रोत उपलब्ध नहीं था। इसके अतिरिक्त मौसम की अनिश्चितता तथा बाजार मूल्य में उतार-चढ़ाव के कारण कृषि आय भी स्थिर नहीं रह पाती थी, जिससे परिवार की आर्थिक स्थिति लगातार चुनौतीपूर्ण बनी रहती थी।

ऐसी स्थिति के कारण ही श्रीमती निक्की के लिए बारहवीं कक्षा तक शिक्षा प्राप्त करने के बाद आर्थिक एवं पारिवारिक परिस्थितियों के कारण आगे की पढ़ाई जारी रखना संभव नहीं हो सका। ऐसे में आत्मनिर्भर बनने तथा परिवार की आय बढ़ाने के लिए वैकल्पिक रोजगार की आवश्यकता महसूस होने लगी।

इसी दौरान कृषि विज्ञान केंद्र, तुर्की द्वारा आयोजित मशरूम उत्पादन प्रशिक्षण कार्यक्रम की जानकारी मिली। प्रशिक्षण के दौरान इन्हें मशरूम उत्पादन की वैज्ञानिक तकनीकों, कम लागत में अधिक लाभ, सीमित स्थान में उत्पादन तथा महिलाओं के लिए इसकी उपयुक्तता के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त हुई।

विपणन नीति

श्रीमती निक्की कुमारी ने मशरूम उत्पादन के साथ-साथ विपणन प्रबंधन पर भी विशेष ध्यान दिया। इन्होंने स्थानीय बाजारों, होटलों एवं खुदरा विक्रेताओं से सीधे संपर्क स्थापित कर अपने उत्पादों के लिए स्थायी बाजार विकसित किया। इसके अतिरिक्त ताजा मशरूम एवं मूल्य संवर्धित उत्पादों की सीधे उपभोक्ताओं को बिक्री कर मध्यस्थों पर निर्भरता कम की। महिला स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से उत्पादों का वितरण कर इन्होंने ग्रामीण स्तर पर विपणन नेटवर्क को मजबूत बनाया। आकर्षक पैकेजिंग एवं ब्रांडिंग अपनाने से इनके द्वारा बनाए गए उत्पादों की बाजार में पहचान बढ़ी तथा उपभोक्ताओं का विश्वास भी मजबूत हुआ। स्थानीय मेलों, कृषि प्रदर्शिनियों एवं त्योहारों के अवसर पर स्टॉल लगाकर इन्होंने अपने उत्पादों का व्यापक प्रचार-प्रसार किया। इन रणनीतियों के परिणामस्वरूप इन्हें स्थायी ग्राहक वर्ग प्राप्त हुआ और उत्पादों की मांग में निरंतर वृद्धि हुई।

कृषि विज्ञान केंद्र, तुर्की, मुजफ्फरपुर-844127, डा. राजेंद्र प्रसाद केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा (बिहार)

मशरूम उत्पादन की यह विशेषता है कि इसे घर के खाली कमरे अथवा छोटे शेड में भी आसानी से किया जा सकता है, इनके लिए अत्यंत प्रेरणादायक सिद्ध हुई। वैज्ञानिक एवं व्यावहारिक प्रशिक्षण से प्राप्त ज्ञान ने निक्की जी के मन में आत्मविश्वास जगाया और इन्होंने मशरूम उत्पादन को स्वरोजगार एवं आत्मनिर्भरता के प्रभावी माध्यम के रूप में अपनाने का निर्णय लिया।

केवीके की प्रभावी भूमिका

कृषि विज्ञान केंद्र, तुर्की द्वारा निक्की कुमारी जी को मशरूम उत्पादन एवं मूल्य संवर्धन से संबंधित सैद्धांतिक एवं प्रायोगिक प्रशिक्षण प्रदान किया गया। इस प्रशिक्षण का उद्देश्य ग्रामीण महिलाओं को वैज्ञानिक मशरूम उत्पादन तकनीकों से जोड़कर स्वरोजगार एवं उद्यमिता के लिए सक्षम बनाना था।

प्रशिक्षण के अंतर्गत ऑयस्टर मशरूम की उन्नत किस्मों का चयन, भूसा आधारित सब्स्ट्रेट की तैयारी, फॉर्मेलिन एवं बाविस्टिन द्वारा उपचार, गुणवत्तायुक्त स्पॉन का उपयोग तथा बैग भरने की वैज्ञानिक विधियों की जानकारी दी गई। इसके साथ ही 70-90 प्रतिशत आर्द्रता एवं 20-30 डिग्री सेल्सियस तापमान प्रबंधन, रोग एवं कीट नियंत्रण तथा स्वच्छता प्रबंधन जैसे महत्वपूर्ण तकनीकी पहलुओं पर भी विशेष प्रशिक्षण प्रदान किया गया।

केवीके, तुर्की द्वारा समय-समय पर तकनीकी परामर्श एवं मार्गदर्शन प्रदान किया गया, जिससे उत्पादन प्रणाली में निरंतर सुधार संभव हो सका। कटाई उपरांत प्रबंधन के अंतर्गत ग्रेडिंग, पैकेजिंग, शीत भंडारण तकनीक तथा ताजा मशरूम के त्वरित विपणन की जानकारी भी दी गई। इसके अतिरिक्त मूल्य संवर्धन प्रशिक्षण के माध्यम से यह बताया गया कि प्रसंस्करण द्वारा उत्पाद का मूल्य बढ़ाने के साथ उसकी भंडारण क्षमता भी बढ़ाई जा सकती है।

मशरूम उत्पादन इकाई

सारणी 1. वर्ष 2022 से 2024 के दौरान मशरूम उत्पादन एवं विपणन में वृद्धि

विवरण	वर्ष		
	2022	**2023**	**2024**
बैग संख्या	20	40	60
कुल उत्पादन	500 कि.ग्रा.	1,200 कि.ग्रा.	1,800 कि.ग्रा.
औसत बिक्री मूल्य	रु. 120/कि.ग्रा.	रु. 140/कि.ग्रा.	रु. 160/कि.ग्रा.

सारणी 2. वर्ष 2022-2024 के दौरान मशरूम उत्पादन का आर्थिक विश्लेषण (मुजफ्फरपुर जिला)

वर्ष 2022	राशि (रुपये)	वर्ष 2023	राशि (रुपये)	वर्ष 2024	राशि (रुपये)
कुल लागत (स्पॉन, भूसा, श्रम, दवा, बिजली)	9,000	कुल लागत	45,000	कुल लागत	90,000
कुल उत्पादन (100 कि.ग्रा. × रुपये 120)	12,000	कुल उत्पादन (500 कि.ग्रा. × रुपये 150)	75,000	कुल उत्पादन (1000 कि.ग्रा. × रुपये 160)	1,60,000
सकल आय	12,000	सकल आय	75,000	सकल आय	1,60,000
शुद्ध आय	3,000	शुद्ध आय	30,000	शुद्ध आय	50,000
बी.सी. अनुपात	1.3	बी.सी. अनुपात	1.6	बी.सी. अनुपात	1.8

प्रशिक्षण के दौरान मशरूम अचार, मशरूम पाउडर, सूखा मशरूम (डिहाइड्रेशन), मशरूम नमकीन एवं बड़ी निर्माण के साथ-साथ लेबलिंग एवं पैकेजिंग तकनीकों का व्यावहारिक प्रशिक्षण भी प्रदान किया गया। इस समग्र प्रशिक्षण एवं तकनीकी मार्गदर्शन ने श्रीमती निक्की कुमारी को केवल एक उत्पादक तक सीमित नहीं रखा, बल्कि उन्हें एक सफल कृषि उद्यमी के रूप में विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

श्रीमती निक्की कुमारी ने वर्ष 2023 से अचार बनाना सीखने के बाद वर्ष 2024 में 100 किलोग्राम मशरूम का अचार तैयार किया, जिसमें 25,000 रुपये खर्च हुए। अचार को 350-400 रुपये प्रति किलोग्राम के भाव से आसपास के गांव में बेचा जिससे कुल आमदनी 40000 रुपये प्राप्त हुई। इस तरह श्रीमती निक्की कुमारी को 15000 रुपये शुद्ध लाभ हुआ। अब वह अपने पति के साथ मशरूम उत्पादन एवं अचार बनाने का काम कृषि विज्ञान केन्द्र के विशेषज्ञों द्वारा समय से प्रशिक्षण एवं प्रत्यक्षण से कर रही हैं।

वर्ष 2024 तक निक्की कुमारी ने मशरूम उत्पादन एवं मूल्य संवर्धन गतिविधियों को सफलतापूर्वक संगठित उद्यम का रूप दे दिया। ताजा मशरूम उत्पादन से इन्हें लगभग रुपये 50,000 की शुद्ध आय

प्राप्त हुई, जबकि मशरूम आधारित मूल्य संवर्धित उत्पादों, जैसे-अचार, पापड़ एवं सूखे मशरूम के निर्माण एवं विपणन से लगभग रुपये 1,00,000 की अतिरिक्त शुद्ध आय अर्जित हुई। इस प्रकार वर्ष 2024 में मशरूम उत्पादन एवं मूल्य संवर्धन गतिविधियों से उन्हें कुल लगभग रुपये 1,50,000 की वार्षिक शुद्ध आय प्राप्त हुई, जिसने परिवार की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

सामाजिक प्रभाव

श्रीमती निक्की कुमारी की सफलता ने स्थानीय स्तर पर महिला उद्यमिता एवं स्वरोजगार को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इन्होंने गांव की लगभग 8-10 महिलाओं को मशरूम उत्पादन एवं मूल्य संवर्धन का प्रशिक्षण देकर इन्हें रोजगार से जोड़ा। इसके साथ ही महिला स्वयं सहायता समूह का गठन कर सामूहिक उत्पादन एवं विपणन की दिशा में भी पहल की।

इनके प्रयासों से ग्रामीण स्तर पर स्वरोजगार के नए अवसर सृजित हुए तथा परिवार की आय में स्थिरता आई। अतिरिक्त आय के कारण बच्चों की शिक्षा, पोषण एवं जीवन स्तर में सुधार हुआ। साथ ही समाज में महिलाओं की आर्थिक भागीदारी एवं उद्यमिता के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित हुआ।

प्रमुख उपलब्धियां

- वर्ष 2022 में सीमित स्तर से मशरूम उत्पादन की शुरुआत।

समूह आधारित उत्पादन पर रहा जोर

ऑयस्टर मशरूम का सफल उत्पादन

- वर्ष 2024 तक बी.सी अनुपात 1.8 तक पहुंचा।
- मशरूम उत्पादन एवं मूल्य संवर्धन से लगभग रुपये 1.50 लाख की वार्षिक शुद्ध आय अर्जित।
- क्षेत्र में सफल महिला उद्यमी के रूप में पहचान स्थापित।

भावी योजनाएं

श्रीमती निक्की कुमारी भविष्य में मशरूम आधारित उद्यम को और अधिक विस्तारित करने की योजना बना रही हैं। इसके अंतर्गत वे स्पॉन उत्पादन इकाई स्थापित कर गुणवत्तायुक्त स्पॉन की स्थानीय उपलब्धता सुनिश्चित करना चाहती हैं। साथ ही ब्रांड पंजीकरण कर राज्य स्तर पर उत्पादों के विपणन का लक्ष्य रखती हैं।

इसके अतिरिक्त वे ऑनलाइन बिक्री प्लेटफॉर्म से जुड़कर अपने उत्पादों की बाजार पहुंच बढ़ाने तथा अधिक से अधिक ग्रामीण महिलाओं को प्रशिक्षण देकर स्वरोजगार से जोड़ने की दिशा में भी कार्य करना चाहती हैं।

श्रीमती निक्की कुमारी की सफलता यह सिद्ध करती है कि वैज्ञानिक प्रशिक्षण, तकनीकी हस्तक्षेप एवं दृढ़ इच्छाशक्ति के माध्यम से सीमित संसाधनों में भी उच्च आय अर्जित की जा सकती है। केवीके, तुर्की के मार्गदर्शन ने इन्हें तकनीकी दक्षता, आत्मविश्वास एवं बाजार की समझ प्रदान की, जिसके बल पर इन्होंने मशरूम उत्पादन को सफल उद्यम में परिवर्तित किया।

आज वे केवल एक सफल मशरूम उत्पादक ही नहीं, बल्कि मुजफ्फरपुर जिले में महिला सशक्तिकरण एवं ग्रामीण उद्यमिता की प्रेरणादायक प्रतीक बन चुकी हैं। उनके लिए मशरूम उत्पादन केवल कृषि गतिविधि नहीं, बल्कि आत्मनिर्भरता, सम्मान एवं सशक्तिकरण की प्रेरक यात्रा है।

सारणी 3. वर्ष 2024 में मशरूम आधारित मूल्य संवर्धित उत्पादों का आर्थिक विश्लेषण

उत्पाद	कुल लागत (रुपये)	सकल आय (रुपये)	शुद्ध आय (रुपये)	बी.सी. अनुपात
मशरूम अचार (100 कि.ग्रा.)	25,000	40,000	15,000	1.60
मशरूम पापड़	40,000	95,000	45,000	1.90
सूखा मशरूम	40,000	80,000	40,000	2.00
कुल	1,05,000	2,15,000	1,00,000	1.83

रेनबो ट्राउट का वैज्ञानिक पालन एवं प्रजनन

रेनू जेठी और **किशोर कुणाल**

रेनबो ट्राउट शीतजल में पाली जाने वाली एक महत्वपूर्ण एवं उच्च मूल्य वाली मत्स्य प्रजाति है, जिसका वैज्ञानिक नाम *ओंकोरिंकस माइकिस* है। शरीर के मध्य भाग में दिखाई देने वाली इंद्रधनुषी रंग की पट्टी के कारण इसे 'रेनबो ट्राउट' कहा जाता है। भारत में इस प्रजाति को सर्वप्रथम कश्मीर में इंग्लैंड के ब्रिस्टल वाटर वर्क्स से मनोरंजक मत्स्य आखेट (स्पोर्ट फिशिंग) के उद्देश्य से लाया गया था। रेनबो ट्राउट के सफल पालन के लिए स्वच्छ, ठंडा और घुलित ऑक्सीजन से भरपूर जल आवश्यक है। पर्वतीय क्षेत्रों में 8-18 डिग्री सेल्सियस तापमान तथा 7.0 मि.ग्रा./लीटर या इससे अधिक घुलित ऑक्सीजन वाले स्वच्छ एवं प्रवाहयुक्त जल में इसका पालन सफलतापूर्वक किया जा सकता है। अपने उत्कृष्ट स्वाद, पौष्टिकता और बाजार मूल्य के कारण इस मछली की घरेलू एवं अंतर्राष्ट्रीय बाजार में अच्छी मांग है। देश में वर्ष 2024-25 के दौरान ट्राउट का उत्पादन लगभग 6,000 टन रहा। अनुकूल शीतजल संसाधनों का वैज्ञानिक तकनीक से उपयोग कर रेनबो ट्राउट पालन को पर्वतीय क्षेत्रों में आय और रोजगार के एक लाभकारी उद्यम के रूप में विकसित किया जा सकता है।

केन्द्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान द्वारा विभिन्न परियोजनाओं के अंतर्गत रेनबो ट्राउट के पालन एवं प्रजनन की तकनीकों का मानकीकरण किया जा चुका है। देश के पर्वतीय राज्यों-हिमाचल प्रदेश, जम्मू-कश्मीर, सिक्किम और अरुणाचल प्रदेश आदि में स्थानीय तापमान एवं जलवायु परिस्थितियों के अनुसार रेनबो ट्राउट का प्रजनन काल सामान्यत: अक्तूबर-नवंबर से फरवरी-मार्च तक रहता है।

भाकृअनुप-केन्द्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, भीमताल (उत्तराखण्ड)

मत्स्य पालन गतिविधियों के सघनीकरण के साथ ट्राउट में विभिन्न स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं भी सामने आती हैं। इनके प्रमुख कारणों में रोगजनकों की उपस्थिति, दूषित जलीय वातावरण, तनाव तथा मछलियों की रोगों के प्रति संवेदनशीलता शामिल हैं।

ट्राउट पालन एवं हैचरी में बीज उत्पादन के दौरान होने वाली विभिन्न स्वास्थ्य समस्याओं का आधारभूत डेटाबेस विकसित करने तथा उनके प्रभावी समाधान खोजने के लिए केन्द्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान द्वारा हैचरी, पालन रेसवे, नर्सरी तथा बड़े रेसवे से विभिन्न नमूने एकत्र किए गए हैं।

रेसवे प्रबंधन

रेनबो ट्राउट पालन के लिए स्वच्छ, ठंडे और पर्याप्त घुलित ऑक्सीजनयुक्त प्रवाहशील जल की आवश्यकता होती है। स्वच्छता बनाए रखने के लिए रेसवे की माह में कम से कम दो बार सफाई करनी चाहिए। ट्राउट पालन के लिए सामान्यत: कम से कम 30 वर्ग मीटर क्षेत्रफल वाले पक्के रेसवे (15 मीटर लंबाई, 2 मीटर चौड़ाई एवं 1.5 मीटर गहराई) उपयुक्त होती है। रेसवे में दो आउटलेट की व्यवस्था

होनी चाहिए, जिनमें एक तली पर तथा दूसरा 1.15-1.30 मीटर की ऊंचाई पर हो।

रेसवे में जल की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए पर्याप्त एवं निरंतर जल प्रवाह सुनिश्चित करना आवश्यक है। मछलियों का भंडारण घनत्व (स्टॉकिंग डेंसिटी) भी नियंत्रित रखा जाना चाहिए, ताकि उन्हें पर्याप्त स्थान और ऑक्सीजन मिल सके। इसके साथ ही समय-समय पर मछलियों का स्वास्थ्य परीक्षण, रोग नियंत्रण तथा मृत मछलियों को तुरंत हटाना आवश्यक है।

ट्राउट पालन के लिए जल में घुलित ऑक्सीजन की मात्रा 7 मि.ग्रा./लीटर से अधिक तथा पी-एच मान 6.5-8.0 के बीच होना उपयुक्त है। बेहतर वृद्धि एवं अधिक उत्पादन के लिए जल का तापमान 8-18 डिग्री सेल्सियस अनुकूल माना जाता है। रेसवे की तली में 3-5 प्रतिशत ढलान और पिटटाइप आउटलेट की व्यवस्था अमोनिया एवं अन्य अपशिष्ट पदार्थों के निष्कासन, ऑक्सीजन की उपलब्धता बनाए रखने तथा जल को स्वच्छ रखने में सहायक होती है।

परिवहन हेतु तैयार रेनबो ट्राउट आइड ओवा की पैकेजिंग

प्रजनन

सामान्यत: एक मादा रेनबो ट्राउट के प्रजनन के लिए 1-2 नर मछलियों की आवश्यकता होती है। अण्डे प्राप्त करने के लिए परिपक्व मादा प्रजनक को स्वच्छ तौलिए की सहायता से सावधानीपूर्वक पकड़कर उसके पेट पर आगे से पीछे की ओर हल्का दबाव दिया जाता है, जिससे अण्डे बाहर निकल आते हैं। सामान्यत: एक कि.ग्रा. भार की मादा से लगभग 1,800-2,500 अण्डे प्राप्त किए जा सकते हैं। इन अंडों को साफ एवं सूखी ट्रे में एकत्र किया जाता है। समान आकार के चमकदार एवं पीले रंग के अण्डे बेहतर गुणवत्ता के माने जाते हैं।

पूर्ण परिपक्व नर मछली के पेट पर आगे से पीछे की ओर हल्का दबाव देकर सफेद मिल्ट प्राप्त किया जाता है। इसे अंडों के साथ मुलायम पंख की सहायता से धीरे-धीरे मिलाया जाता है। सफेद एवं प्रवाहशील मिल्ट नर की उचित प्रजनन परिपक्वता का संकेत है। निषेचन की यह प्रक्रिया कम प्रकाश अथवा अंधेरे में करनी चाहिए। इसके बाद ट्रे को 15-20 मिनट तक ढककर रखा जाता है और फिर अंडों को स्वच्छ पानी से धोया जाता है।

निषेचित अण्डे पारदर्शी तथा पीले-हरे या लाल ईंट जैसे रंग के दिखाई देते हैं, जबकि अनिषेचित एवं खराब अण्डे सफेद हो जाते हैं। ऐसे अंडों को नियमित रूप से निकालते रहना चाहिए। निषेचित अंडों को ऊष्मायन के लिए जालीयुक्त ट्रे में रखा जाता है तथा जल प्रवाह लगभग 5-7 लीटर/मिनट बनाए रखा जाता है। 45×45×15 सें.मी. आकार की एक ट्रे में लगभग 8,000-10,000 निषेचित अण्डे रखे जा सकते हैं। ऊष्मायन अवधि के दौरान अंडों को कम से कम हिलाना चाहिए।

लगभग 8-10 डिग्री सेल्सियस जल तापमान पर 21-35 दिनों में अंडों से योक-सैक युक्त लार्वा निकल आते हैं। लगभग 10-15 दिनों में योकसैक के अवशोषण के बाद लार्वा जल की सतह पर तैरने लगते हैं और बाहरी आहार ग्रहण करने योग्य हो जाते हैं। इस अवस्था में उन्हें 48 प्रतिशत से अधिक प्रोटीनयुक्त महीन संतुलित आहार प्रतिदिन 4-6 बार दिया जाता है। लगभग दो-तीन माह बाद विकसित मत्स्य बीज को आगे पालन के लिए नर्सरी रेसवे में स्थानांतरित किया जा सकता है।

नर्सरी प्रबंधन

ट्राउट नर्सरी में स्वच्छ एवं प्रवाहशील जल की निरंतर आपूर्ति सुनिश्चित करनी चाहिए। छोटे आयताकार नर्सरी रेसवे में 100-200 अंगुलिकाओं का उपयुक्त भंडारण घनत्व के अनुसार संचय किया जा सकता है। नर्सरी में संचय से पूर्व अंगुलिका अथवा विकसित

प्रजनकों का चयन

परिपक्व मादा ट्राउट

परिपक्व नर ट्राउट

प्रजनन से लगभग तीन-चार माह पूर्व उपयुक्त प्रजनक ट्राउट का चयन कर लिया जाता है। नर एवं मादा मछलियों को प्रजनन से तीन-चार सप्ताह पहले पालन रेसवे से निकालकर अलग-अलग रेसवे में रखा जाता है। ट्राउट में पूर्ण प्रजनन परिपक्वता सामान्यत: अक्तूबर से फरवरी के दौरान देखी जाती है। रेनबो ट्राउट लगभग दो वर्ष की आयु में प्रजनन योग्य हो जाती है, लेकिन अच्छी गुणवत्ता के अण्डे प्राप्त करने के लिए तीन-चार वर्ष की मादा मछली को अधिक उपयुक्त माना जाता है।

आहार प्रबंधन

रेनबो ट्राउट का पालन मुख्यत: कृत्रिम आहार पर निर्भर करता है। मछली की अवस्था के अनुसार इसके आहार में लगभग 35-48 प्रतिशत उच्च गुणवत्ता वाला प्रोटीन तथा 10-15 प्रतिशत वसा होना आवश्यक है। संतुलित आहार फिश मील, सोयाबीन मील, गेहूं का आटा, स्टार्च, मछली का तेल, यीस्ट तथा खनिज-विटामिन मिश्रण से तैयार किया जा सकता है। वयस्क मछलियों को उनके कुल शरीर भार का लगभग 1-3 प्रतिशत आहार प्रतिदिन दो बार दिया जाता है। इसके लिए मछली के आकार के अनुरूप तैरने वाला पैलेट आहार उपयुक्त रहता है। आहार की मात्रा, पैलेट का आकार और आहार देने की बारंबारता मछलियों की आयु एवं आकार के साथ-साथ जल के तापमान के अनुसार निर्धारित करनी चाहिए।

वैज्ञानिक तकनीक से स्वस्थ उत्पादन

अंगुलिकाओं को 200-300 मि.ग्रा./लीटर पोटेशियम परमैंगनेट के घोल अथवा 200 मि.ग्रा./लीटर क्लोरामाइन-टी के घोल में 1-2 मिनट तक उपचारित किया जा सकता है।

ट्राउट पालन में होने वाली हानि को कम करने के लिए प्रक्षेत्र स्थापना के समय उपयुक्त स्थान का चयन, स्वस्थ मत्स्य बीज का उचित घनत्व पर संचय, वैज्ञानिक प्रबंधन पद्धतियों का पालन तथा मछलियों की नियमित निगरानी आवश्यक है।

स्वास्थ्य प्रबंधन

ट्राउट पालन में मछलियों का बेहतर स्वास्थ्य अच्छी वृद्धि, गुणवत्तापूर्ण बीज उत्पादन और अधिक उत्पादन का आधार है। ट्राउट ठंडे, स्वच्छ और ऑक्सीजन युक्त जल में बेहतर वृद्धि करती है, इसलिए पालन के दौरान जल की गुणवत्ता बनाए रखना आवश्यक है। मछलियों का नियमित निरीक्षण करने से रोग के शुरुआती लक्षणों की समय पर पहचान की जा सकती है। बाहरी परजीवी, कवकीय एवं जीवाणु संक्रमण से बचाव के लिए उचित जैव-सुरक्षा एवं उपचार संबंधी उपाय अपनाने चाहिए।

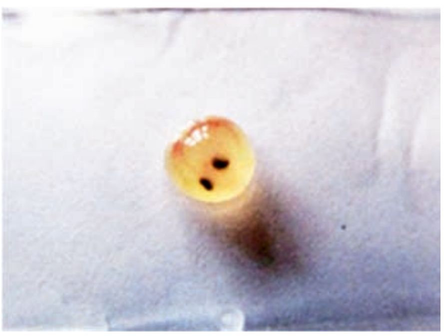

नेत्रयुक्त अंडे

सैप्रोलेग्निया कवक का संक्रमण ट्राउट हैचरी में अंडों को प्रभावित करने वाली प्रमुख समस्याओं में से एक है। अंडों वाली ट्रे के नीचे कार्बनिक अवशेष जमा होने से कवक के विकास के लिए अनुकूल परिस्थितियां बन सकती हैं। कवकीय हाइफी पहले खराब अथवा मृत अंडों पर विकसित होती हैं और बाद में स्वस्थ अंडों को भी प्रभावित कर सकती हैं। जल के तापमान में अत्यधिक उतार-चढ़ाव भी संक्रमण के प्रसार में सहायक हो सकता है। नेत्रयुक्त अण्डे (आइड ओवा) बनने के बाद अंडों को ट्रे में उचित रूप से न फैलाने पर वे एक-दूसरे से चिपक सकते हैं, जिससे जल प्रवाह प्रभावित होता है और संक्रमण का जोखिम बढ़ सकता है।

कवकीय संक्रमण से बचाव के लिए हैचरी एवं ऊष्मायन ट्रे की नियमित साफ-सफाई, मृत एवं संक्रमित अंडों को समय पर हटाना तथा स्वस्थ प्रजनक मछलियों का चयन आवश्यक है। संक्रमण की स्थिति में अनुशंसित उपचार विशेषज्ञ की सलाह के अनुसार ही करना चाहिए। इसके अतिरिक्त नए मत्स्य बीज को सीधे पालन रेसवे में छोड़ने के बजाय कुछ समय तक अलग रखकर उसके स्वास्थ्य की निगरानी करना उपयोगी है। इन प्रबंधन उपायों को अपनाकर रोगों से होने वाली हानि को कम करने के साथ ट्राउट की बेहतर वृद्धि एवं उत्पादन सुनिश्चित किया जा सकता है।

बीज परिवहन

सामान्यत: 7-11 डिग्री सेल्सियस तापमान पर निषेचित अण्डे 1-29 दिनों में नेत्रयुक्त अण्डे (आइड ओवा) की अवस्था में विकसित हो जाते हैं। इस अवस्था में इन्हें एक स्थान से दूसरे स्थान तक आसानी से ले जाया जा सकता है। परिवहन के लिए आइड ओवा अवस्था सबसे उपयुक्त मानी जाती है, क्योंकि इस समय बाहरी आहार की आवश्यकता नहीं होती, मृत्यु दर अपेक्षाकृत कम रहती है तथा जल की आवश्यकता भी बहुत कम होती है।

लगभग 45×30×30 सें.मी. आकार के एक छोटे थर्मोकोल बॉक्स में 6-7 ट्रे की सहायता से लगभग एक लाख आइड ओवा का सुरक्षित परिवहन किया जा सकता है।

रेनबो ट्राउट का सफल प्रजनन एवं गुणवत्तापूर्ण बीज उत्पादन स्वच्छ एवं ठंडे जल, स्वस्थ प्रजनकों के चयन, संतुलित पोषण तथा वैज्ञानिक हैचरी प्रबंधन पर निर्भर करता है। इन सभी पहलुओं का समुचित प्रबंधन कर गुणवत्तापूर्ण मत्स्य बीज उत्पादन के साथ ट्राउट पालन से बेहतर आय प्राप्त की जा सकती है। केन्द्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान द्वारा समय-समय पर रेनबो ट्राउट पालन, प्रजनन एवं स्वास्थ्य प्रबंधन से संबंधित प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। किसान एवं मत्स्य पालक इन प्रशिक्षण कार्यक्रमों से तकनीकी जानकारी प्राप्त कर ट्राउट पालन को लाभकारी उद्यम के रूप में अपनाकर अपनी आय में वृद्धि कर सकते हैं।

जलवायु अनुकूल मकचरी की वैज्ञानिक खेती

एम.बी. रेड्डी और **सुमन सेन**

मकचरी एक उभरती हुई जलवायु सहिष्णु बहुकटाई वाली चारा फसल है, जो अपनी उच्च हरित जैवभार उत्पादन क्षमता, उत्कृष्ट पुनर्वृद्धि तथा अधिक कल्ले देने की क्षमता के कारण लोकप्रियता प्राप्त कर रही है। पारंपरिक चारा मक्का की तुलना में यह जैविक एवं अजैविक तनावों, जैसे-सूखा, अस्थायी जलभराव तथा फॉल आर्मीवर्म के प्रकोप के प्रति अधिक सहनशील है। इसके चारे में 9-12 प्रतिशत क्रूड प्रोटीन तथा पर्याप्त मात्रा में रेशा होता है, जिससे यह पशुओं के लिए अत्यंत पौष्टिक चारा सिद्ध होता है। समय पर बुआई, संतुलित पोषक तत्व प्रबंधन, प्रभावी खरपतवार नियंत्रण तथा उचित अवस्था पर कटाई जैसी वैज्ञानिक कृषि तकनीकों को अपनाकर इससे लगभग 400-450 क्विंटल प्रति हैक्टर गुणवत्तापूर्ण हरा चारा प्राप्त किया जा सकता है। इसकी जलवायु सहनशीलता, उच्च उत्पादकता एवं पोषण गुणवत्ता इसे बदलती जलवायु परिस्थितियों में सतत चारा उत्पादन के लिए एक उपयुक्त विकल्प बनाती है।

जलवायु परिवर्तन के वर्तमान दौर में पशुपालकों के समक्ष हरे चारे की बढ़ती कमी, पशु आहार की बढ़ती लागत, चरागाहों का सीमित होना तथा अनिश्चित मौसम जैसी गंभीर चुनौतियां हैं। ऐसी परिस्थितियों में मकचरी, जिसे चारा फसलों का 'हरित स्वर्ण' भी कहा जाता है, कम समय में अत्यधिक हरा जैवभार उत्पन्न करने की क्षमता के कारण तेजी से लोकप्रिय हो रही है। यद्यपि इसका स्वरूप मक्का जैसा दिखाई देता है, फिर भी इसमें प्रचुर कल्ले बनाने की क्षमता, घनी पत्तेदार वृद्धि, कटाई के बाद तीव्र पुनर्वृद्धि तथा प्रतिकूल जलवायु परिस्थितियों के प्रति बेहतर अनुकूलन जैसी अनेक विशेषताएं हैं।

इसके अतिरिक्त, सामान्य चारा मक्का की अपेक्षा यह फॉल आर्मीवर्म के प्रति अधिक सहनशील है, जिससे फसल हानि एवं रासायनिक कीटनाशकों की आवश्यकता कम हो जाती है। यही विशेषताएं इसे विशेष रूप से वर्षा आधारित एवं सीमित संसाधनों वाले क्षेत्रों के लिए एक आदर्श चारा फसल बनाती हैं।

मकचरी केवल अपनी अनुकूलन क्षमता एवं उच्च चारा उत्पादन के लिए ही नहीं, बल्कि अपनी उत्कृष्ट पोषण गुणवत्ता के लिए भी महत्वपूर्ण है। इसके चारे में पर्याप्त मात्रा में क्रूड प्रोटीन तथा उत्तम रेशा संरचना पाई जाती है, जो संतुलित पशु पोषण के लिए उपयुक्त है। इसका कोमल एवं पत्तेदार चारा पशुओं द्वारा अधिक रुचि से खाया जाता है तथा पाचन क्षमता एवं उत्पादन प्रदर्शन में सुधार करता है। मकचरी में सूखा सहनशीलता, तनाव प्रतिरोध एवं अनुकूलन क्षमता से संबंधित जीन पाए जाते हैं, जो भविष्य में जलवायु अनुकूल मक्का किस्मों के विकास में उपयोगी हो सकते हैं। इसलिए मकचरी आने वाले समय में सतत पशुपालन एवं जलवायु स्मार्ट कृषि को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

उत्पादन तकनीक

उपयुक्त जलवायु

मकचरी गर्म मौसम की बहुकटाई चारा फसल है, जो गर्म एवं आर्द्र जलवायु में अच्छी वृद्धि करती है। यह अधिक आर्द्रता और अस्थायी जलभराव को भी सहन कर सकती है। इस कारण इसकी खेती वर्षा आधारित एवं अधिक आर्द्रता वाले क्षेत्रों में सफलतापूर्वक की जा सकती है।

भाकृअनुप-भारतीय पशु चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, बरेली-243122 (उत्तर प्रदेश)

पोषक तत्व प्रबंधन

अधिक चारा उत्पादन एवं बेहतर वृद्धि के लिए संतुलित पोषक तत्व प्रबंधन आवश्यक है। बुआई के समय 60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन तथा 30 कि.ग्रा. फॉस्फोरस प्रति हैक्टर की दर से दें। बुआई के 25-30 दिनों बाद 20-30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हैक्टर की दर से टॉप ड्रेसिंग करें। प्रथम कटाई के तुरंत बाद 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हैक्टर की दर से देने से फसल की पुनर्वृद्धि बेहतर होती है।

सीडड्रिल से बीजों की बुआई

मकचरी के बीज

भूमि एवं खेत की तैयारी

मकचरी की सफल खेती के लिए अच्छी जल निकासी वाली बलुई दोमट से दोमट मृदा उपयुक्त मानी जाती है, जिसका पीएच मान 5.5-7.0 के बीच हो। यह हल्की अम्लीय मृदा में भी अच्छी वृद्धि करती है। खेत तैयार करने के लिए एक गहरी जुताई के बाद दो बार हैरो चलाकर पाटा लगाएं, ताकि मृदा भुरभुरी एवं समतल हो जाए और बीजों का अच्छा अंकुरण तथा पौधों की उचित स्थापना सुनिश्चित हो सके।

बुआई का समय

मकचरी की खेती ग्रीष्म और खरीफ, दोनों मौसमों में की जा सकती है। ग्रीष्मकालीन फसल की बुआई मार्च से मध्य अप्रैल तक तथा खरीफ फसल की बुआई मानसून आरंभ होने के तुरंत बाद जून-जुलाई में करना उपयुक्त रहता है। समय पर बुआई करने से बेहतर अंकुरण, तीव्र पौध वृद्धि और अधिक कल्ले प्राप्त होते हैं।

बीज दर एवं बुआई

उचित पौध संख्या के लिए 35-40 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर पर्याप्त होता है। बुआई सामान्यत: सीडड्रिल से पंक्तियों में 25-30 सें.मी. की दूरी पर की जाती है। बुआई के बाद पाटा चलाएं, ताकि बीज और मृदा के बीच अच्छा संपर्क स्थापित हो सके। बीज एवं मृदाजनित रोगों से बचाव के लिए बुआई से पूर्व बीज को थीरम अथवा एग्रोसान जीएन की 3 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें।

बुआई हेतु खेत की तैयारी

जल प्रबंधन

मकचरी नमी की कमी को अपेक्षाकृत अच्छी तरह सहन कर सकती है, फिर भी लंबे समय तक सूखे की स्थिति रहने पर सिंचाई करने से चारा उत्पादन में वृद्धि होती है। वर्षा ऋतु में पर्याप्त वर्षा न होने पर एक-दो सिंचाइयों की आवश्यकता पड़ सकती है, जबकि ग्रीष्मकालीन फसल में नियमित अंतराल पर सिंचाई करना आवश्यक है। खेत में उचित जल निकासी की व्यवस्था भी बनाए रखें।

सारणी: मकचरी के पोषक तत्वों की मात्रा (शुष्क पदार्थ के आधार पर)

पोषक तत्व	मात्रा (प्रतिशत)
क्रूड प्रोटीन	8-12
न्यूट्रल डिटर्जेंट फाइबर	55-65
एसिड डिटर्जेंट फाइबर	30-40
एसिड डिटर्जेंट लिग्निन	4-7
कुल खनिज पदार्थ	8-12
अम्लीय अघुलनशील राख	1-3

खरपतवार प्रबंधन

फसल की प्रारंभिक अवस्था में प्रभावी खरपतवार नियंत्रण पौधों की बेहतर स्थापना एवं वृद्धि के लिए आवश्यक है। बुआई के 3-4 सप्ताह बाद एक बार गुड़ाई अथवा हाथ से निराई करने से खरपतवारों का प्रभावी नियंत्रण होता है और मृदा में वायु संचार भी बेहतर होता है। खरपतवारों का अधिक प्रकोप होने पर एट्राजीन की 0.75 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व मात्रा प्रति हैक्टर को 600 लीटर पानी में घोलकर बुआई के 2-3 दिन के भीतर छिड़काव किया जा सकता है।

रोग एवं कीट प्रबंधन

मकचरी सामान्यत: प्रमुख रोगों एवं कीटों से काफी हद तक मुक्त रहती है तथा फॉल आर्मीवर्म के प्रति भी बेहतर सहनशीलता प्रदर्शित करती है। फिर भी स्वस्थ एवं उपचारित बीज का उपयोग, स्वच्छ खेती और खेत की नियमित साफ-सफाई जैसी निवारक विधियां अपनानी चाहिए। इससे फसल को स्वस्थ रखने और बेहतर चारा उत्पादन प्राप्त करने में सहायता मिलती है।

कटाई प्रबंधन

मकचरी बहुकटाई चारा फसल है। इसकी पहली कटाई सामान्यत: बुआई के 60-70 दिनों बाद की जाती है। इसके बाद फसल की वृद्धि एवं नमी की उपलब्धता के अनुसार 40-45 दिनों के अंतराल पर कटाई की जा सकती है। उचित अवस्था में कटाई करने से चारे की गुणवत्ता, स्वादिष्टता और पाचनशीलता बनी रहती है। उन्नत उत्पादन तकनीकों को अपनाकर लगभग 400-450 क्विंटल प्रति हैक्टर गुणवत्तापूर्ण हरा चारा प्राप्त किया जा सकता है।

इस प्रकार उपयुक्त समय पर बुआई, संतुलित पोषक तत्व एवं जल प्रबंधन, प्रभावी खरपतवार नियंत्रण और समय पर कटाई जैसी उन्नत उत्पादन तकनीकों को अपनाकर किसान कम लागत में गुणवत्तापूर्ण हरे चारे की निरंतर उपलब्धता सुनिश्चित कर सकते हैं। इससे पशुओं के पोषण में सुधार के साथ-साथ पशुपालन की उत्पादकता और लाभप्रदता बढ़ाने में भी सहायता मिल सकती है।

ताड़ उत्पादन से भरपूर संभावनाएं

महिपाल चौधरी, अनुषा एम.एन., बी. कृष्णा राव और **संजय सातपुते**

"तेल ताड़ या ऑयल पाम (एलेइस गिनीएन्सिस जैक.) विश्व की सर्वाधिक उत्पादक तिलहनी फसल है, जो प्रति इकाई क्षेत्रफल से सर्वाधिक खाद्य तेल उत्पादन की क्षमता रखती है। वैश्विक स्तर पर व्यावसायिक वर्गीय वनस्पति तेल में इसकी हिस्सेदारी लगभग 40 प्रतिशत है और यह तीन अरब से अधिक लोगों के दैनिक आहार का महत्वपूर्ण हिस्सा है। खाद्य उत्पादों के साथ-साथ इसका उपयोग स्वच्छता एवं विभिन्न औद्योगिक उत्पादों में भी व्यापक रूप से किया जाता है। भारत अपनी कुल खाद्य तेल आवश्यकता का लगभग 55-60 प्रतिशत (15-16 मिलियन टन) आयात करता है, जिसमें ताड़ तेल की हिस्सेदारी सर्वाधिक है। ऐसे में खाद्य तेलों में आत्मनिर्भरता और आयात पर निर्भरता कम करने की दिशा में देश में ताड़ की खेती का विस्तार महत्वपूर्ण विकल्प के रूप में उभर रहा है। राष्ट्रीय खाद्य तेल मिशन ऑयल पाम (एनएमईओ-ओपी) के माध्यम से इसके क्षेत्रफल और उत्पादन को बढ़ावा दिया जा रहा है। हालांकि, इसके विस्तार के साथ जल एवं भूमि संसाधनों पर दबाव, पर्यावरण संरक्षण और जैव विविधता से जुड़ी चुनौतियों का वैज्ञानिक एवं संतुलित प्रबंधन भी आवश्यक है।"

भाकृअनुप-भारतीय मृदा एवं जल संरक्षण संस्थान, अनुसंधान केंद्र, बल्लारी-583104

भारत में ताड़ की खेती मुख्यत: आंध्र प्रदेश, तेलंगाना, कर्नाटक, तमिलनाडु, केरल, ओडिशा तथा पूर्वोत्तर राज्यों में की जा रही है। देश में लगभग 19 लाख हैक्टर क्षेत्र को इसकी खेती के लिए संभावित माना गया है, जिसका अभी सीमित भाग ही उपयोग में लाया जा रहा है। इस संभावना को देखते हुए राष्ट्रीय खाद्य तेल मिशन-ऑयल पाम (एनएमईओ-ओपी) के अंतर्गत क्षेत्र विस्तार के साथ गुणवत्तापूर्ण रोपण सामग्री, सिंचाई सुविधाओं और प्रसंस्करण अवसंरचना को सुदृढ़ करने पर बल दिया जा रहा है।

मिशन के अंतर्गत वर्ष 2025-26 तक 6.50 लाख हैक्टर क्षेत्र को ताड़ की खेती के अंतर्गत लाने तथा वर्ष 2029-30 तक कच्चे ताड़ तेल का उत्पादन 28 लाख टन तक बढ़ाने का लक्ष्य रखा गया है। नवंबर 2025 तक लगभग 2.50 लाख हैक्टर अतिरिक्त क्षेत्र इसके अंतर्गत लाया जा चुका है, जिससे देश में ताड़ का कुल क्षेत्रफल बढ़कर लगभग 6.20 लाख हैक्टर हो गया है। वहीं, कच्चे ताड़ का उत्पादन वर्ष 2014-15 के 1.91 लाख टन से बढ़कर वर्ष 2024-25 में 3.90 लाख टन तक पहुंच गया है।

खाद्य तेलों में आयात निर्भरता

भारत विश्व के प्रमुख खाद्य तेल आयातक देशों में शामिल है। देश में खाद्य तेलों की वार्षिक मांग लगभग 24-26 मिलियन टन है, जबकि घरेलू उत्पादन लगभग 10-12 मिलियन टन तक सीमित है। वर्ष 2009-10 से 2023-24 के दौरान खाद्य तेलों की खपत में लगभग 66 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि आयात में लगभग 77.5 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई। इसके मुकाबले घरेलू उपलब्धता में लगभग 53 प्रतिशत की वृद्धि हुई। यह अंतर खाद्य तेलों के लिए आयात पर बढ़ती निर्भरता को दर्शाता है। बढ़ती जनसंख्या, शहरीकरण और बदलती खाद्य आदतों के कारण भविष्य में मांग और बढ़ने की संभावना है। ऐसे में अधिक तेल उत्पादकता के कारण ताड़ घरेलू उत्पादन बढ़ाने का एक महत्वपूर्ण विकल्प है। उपयुक्त क्षेत्रों में इसकी खेती का योजनाबद्ध एवं क्षेत्र विशिष्ट विस्तार खाद्य तेल उत्पादन बढ़ाने और आयात निर्भरता कम करने में महत्वपूर्ण योगदान दे सकता है।

सीमित भूमि में अधिक उत्पादन

ताड़ एक बहुवर्षीय फसल है, जिसका आर्थिक उत्पादन काल लंबा होता है। प्रति इकाई क्षेत्रफल अधिक तेल उत्पादन इसकी प्रमुख विशेषता है। वैश्विक स्तर पर ताड़ लगभग 19 मिलियन हैक्टर क्षेत्र में उगाया जाता है और इससे प्रतिवर्ष लगभग 81 मिलियन टन तेल प्राप्त होता है। इसके विपरीत, सोयाबीन तथा राई-सरसों जैसी प्रमुख तिलहनी फसलों से संयुक्त रूप से लगभग 84 मिलियन टन तेल उत्पादन के लिए 163 मिलियन हैक्टर से अधिक कृषि भूमि की आवश्यकता होती है। यह तुलना ताड़ की उच्च भूमि उपयोग दक्षता को रेखांकित करती है।

हालांकि, ताड़ को देश में खाद्य तेलों की कमी के एकमात्र समाधान के रूप में नहीं देखा जा सकता। इसकी खेती की सफलता जल उपलब्धता, क्षेत्रीय उपयुक्तता, पर्यावरणीय स्थिरता और सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों पर निर्भर करती है। इसलिए ताड़ के क्षेत्र विस्तार के साथ सोयाबीन, सरसों, सूरजमुखी एवं अन्य तिलहनी फसलों के उत्पादन को भी समानांतर रूप से बढ़ावा देना आवश्यक है। ऐसी समेकित एवं संतुलित रणनीति ही भारत को खाद्य तेलों में आत्मनिर्भरता की दिशा में आगे बढ़ाने का अधिक व्यावहारिक और टिकाऊ मार्ग हो सकती है।

ताड़ की खेती एक दीर्घकालिक एवं पूंजी-गहन कृषि प्रणाली है, जिसमें प्रथम वर्ष स्थापना पर लगभग रुपये 1.65-2.20 लाख/हैक्टर का व्यय आता है। इस लागत में मुख्य रूप से पौध सामग्री, ड्रिप सिंचाई प्रणाली और भूमि की तैयारी पर होने वाला खर्च शामिल है। हालांकि, दूसरे और तीसरे वर्ष में दलहनी फसलों एवं सब्जियों की अंतरवर्ती खेती से अतिरिक्त आय प्राप्त कर किसान प्रारंभिक लागत के भार को कुछ हद तक कम कर सकते हैं।

ताड़ फसल में चौथे वर्ष से उत्पादन प्रारंभ हो जाता है और पांचवें वर्ष के बाद यह पूर्ण उत्पादन अवस्था में पहुंचने लगती है। इस अवस्था में 15-25 टन ताजा फल गुच्छ/हैक्टर उत्पादन से लगभग 1.20-2.50 रुपये लाख/हैक्टर की सकल आय प्राप्त की जा सकती है। वहीं, वार्षिक रखरखाव पर लगभग 60,000-80,000 रुपये/हैक्टर व्यय आता है। इस प्रकार

ताड़ वृक्ष बागान की प्रारंभिक अवस्था

सारणी: भारत में ताड़ एवं खाद्य तेल की वर्तमान स्थिति

विवरण	स्थिति/आंकड़ा
ताड़ तेल के लिए संभावित क्षेत्र	लगभग 19.0 लाख हैक्टर
ताड़ तेल का कुल क्षेत्रफल (नवंबर 2025)	लगभग 6.20 लाख हैक्टर
एनएमईओ-ओपी के तहत क्षेत्र विस्तार (नवंबर 2025 तक)	लगभग 2.50 लाख हैक्टर
ताड़ तेल क्षेत्र का लक्ष्य (2025-26)	6.50 लाख हैक्टर
कच्चे ताड़ तेल का उत्पादन (2024-25)	3.90 लाख टन
कच्चे ताड़ तेल उत्पादन का लक्ष्य (2029-30)	28.0 लाख टन
देश में खाद्य तेल की वार्षिक मांग	लगभग 24-26 मिलियन टन
घरेलू खाद्य तेल उत्पादन	लगभग 10-12 मिलियन टन
खाद्य तेल खपत में वृद्धि (2009-10 से 2023-24)	लगभग 66.0 प्रतिशत
खाद्य तेल आयात में वृद्धि (2009-10 से 2023-24)	लगभग 77.5 प्रतिशत
घरेलू उपलब्धता में वृद्धि	लगभग 53 प्रतिशत

फल गुच्छों से युक्त ताड़ वृक्ष बागान, आयु 7-8 वर्ष

लगभग 60,000 से 1.70 लाख रुपये/हैक्टर/वर्ष तक शुद्ध लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

सामान्यत: ताड़ की खेती में प्रारंभिक निवेश की भरपाई लगभग 5-6 वर्षों में हो सकती है, जबकि इसकी आर्थिक उत्पादन अवधि लगभग 25-30 वर्ष होती है। हालांकि, इससे प्राप्त होने वाला लाभ जल की उपलब्धता, उत्पादन स्तर, बाजार मूल्य, प्रसंस्करण सुविधाओं और बेहतर फसल प्रबंधन पर निर्भर करता है। वैज्ञानिक प्रबंधन एवं आवश्यक नीतिगत सहयोग से ताड़ की खेती किसानों के लिए दीर्घकालिक आय का बेहतर विकल्प बनने के साथ देश में खाद्य तेल उत्पादन बढ़ाने में भी सहायक हो सकती है।

सुव्यवस्थित ताड़ वृक्ष बागान, आयु 14-15 वर्ष

प्रमुख चुनौतियां

अधिक जल आवश्यकता

ताड़ की बेहतर वृद्धि एवं उत्पादन के लिए वर्षभर पर्याप्त जल उपलब्धता आवश्यक है। लगभग 1,500-2,000 मि.मी. वार्षिक जल आवश्यकता के कारण जल की कमी वाले क्षेत्रों में इसकी खेती चुनौतीपूर्ण हो सकती है।

लंबी प्रारंभिक अवधि

रोपण के बाद आर्थिक उत्पादन प्राप्त करने में लगभग 3-4 वर्ष का समय लगता है। इस अवधि में नियमित आय नहीं मिलने के कारण छोटे एवं सीमांत किसानों के लिए प्रारंभिक निवेश एक चुनौती हो सकता है।

मूल्य अस्थिरता एवं बाजार जोखिम

अंतर्राष्ट्रीय बाजार में ताड़ की कीमतों में होने वाला उतार-चढ़ाव किसानों को मिलने वाले मूल्य एवं उनकी आय को प्रभावित कर सकता है।

प्रसंस्करण अवसंरचना की आवश्यकता

ताजा फल गुच्छों (एफएफबी) का कटाई के बाद शीघ्र, सामान्यत: 24-48 घंटे के भीतर प्रसंस्करण आवश्यक होता है। इसलिए उत्पादन क्षेत्रों के निकट पर्याप्त प्रसंस्करण सुविधाओं की उपलब्धता महत्वपूर्ण है।

तकनीकी एवं प्रबंधन संबंधी सीमाएं

बेहतर उत्पादन के लिए उचित पोषण, सिंचाई, कीट एवं रोग प्रबंधन सहित वैज्ञानिक उत्पादन तकनीकों की जानकारी आवश्यक है। किसानों में इन तकनीकों की सीमित जानकारी एवं प्रशिक्षण की कमी ताड़ उत्पादन के विस्तार में बाधा बन सकती है।

पर्यावरणीय पहलू

वनों एवं जैव विविधता पर प्रभाव

ताड़ की खेती के अनियोजित विस्तार से प्राकृतिक वनों एवं जैव विविधता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। इसलिए इसके विस्तार में पर्यावरणीय रूप से संवेदनशील क्षेत्रों के संरक्षण पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है।

संभावनाएं

उच्च उत्पादकता एवं संसाधन दक्षता: ताड़ अन्य तिलहनी फसलों की तुलना में लगभग 6-10 गुना अधिक तेल उत्पादन क्षमता रखता है। इससे सीमित भूमि संसाधनों का अधिक कुशल उपयोग संभव है।

खाद्य तेल आयात में कमी: घरेलू स्तर पर ताड़ का उत्पादन बढ़ने से खाद्य तेलों के आयात पर निर्भरता कम करने के साथ विदेशी मुद्रा की बचत में भी सहायता मिल सकती है।

किसानों की आय में स्थिरता: ताड़ एक बहुवर्षीय फसल है, जिससे लगभग 25-30 वर्षों तक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। इसलिए यह किसानों को दीर्घ अवधि तक नियमित आय प्रदान करने की क्षमता रखती है।

ग्रामीण अर्थव्यवस्था का सुदृढ़ीकरण: ताड़ आधारित प्रसंस्करण, परिवहन एवं अन्य सहायक गतिविधियों के विकास से ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर सृजित होने के साथ स्थानीय अर्थव्यवस्था को भी बढ़ावा मिल सकता है।

बहुफसली प्रणाली में समावेशन: ताड़ के प्रारंभिक वर्षों में उपलब्ध खाली स्थान में दलहनी फसलों एवं सब्जियों की अंतरवर्ती खेती कर किसान अतिरिक्त आय प्राप्त कर सकते हैं। इससे प्रारंभिक वर्षों में आर्थिक जोखिम कम करने में भी सहायता मिलती है।

मृदा स्वास्थ्य पर प्रभाव

लंबे समय तक एकल फसल प्रणाली अपनाने से मृदा में जैविक कार्बन की कमी, पोषक तत्वों का असंतुलन तथा मृदा संरचना प्रभावित होने की आशंका रहती है।

जल संसाधनों पर दबाव

ताड़ की खेती में पर्याप्त जल की आवश्यकता होती है। जल संसाधनों का अविवेकपूर्ण उपयोग भूजल स्तर एवं स्थानीय जल उपलब्धता को प्रभावित कर सकता है। इसलिए जल उपलब्धता के अनुरूप ही इसकी खेती का विस्तार आवश्यक है।

अपशिष्ट प्रबंधन

ताड़ प्रसंस्करण इकाइयों से निकलने वाले पाम ऑयल मिल एफ्लुएंट (पीओएमई) का उचित प्रबंधन न होने पर जल एवं मृदा प्रदूषण की समस्या उत्पन्न हो सकती है।

सामाजिक एवं आर्थिक प्रभाव

बड़े स्तर पर भूमि उपयोग में परिवर्तन से स्थानीय कृषि प्रणाली प्रभावित हो सकती है। इसके साथ ही छोटे किसानों के हितों की सुरक्षा तथा खाद्य फसलों के लिए पर्याप्त कृषि क्षेत्र बनाए रखना भी महत्वपूर्ण है।

कटाई उपरांत ताजा फल गुच्छों का परिवहन

अतः ताड़ को खाद्य तेल आत्मनिर्भरता के एकमात्र विकल्प के बजाय अन्य तिलहनी फसलों के साथ एक पूरक विकल्प के रूप में बढ़ावा देना अधिक उपयुक्त होगा। वैज्ञानिक उत्पादन तकनीकों, प्राकृतिक संसाधनों के कुशल उपयोग, मजबूत प्रसंस्करण अवसंरचना, नीतिगत सहयोग और किसानों की भागीदारी के माध्यम से ताड़ उत्पादन को आर्थिक रूप से लाभकारी एवं पर्यावरणीय रूप से टिकाऊ बनाया जा सकता है।

नीति

क्षेत्र-विशिष्ट योजनाः ताड़ की खेती का विस्तार केवल उपयुक्त जलवायु, मृदा एवं पर्याप्त जल उपलब्धता वाले क्षेत्रों में किया जाना चाहिए। इससे प्राकृतिक संसाधनों पर अनावश्यक दबाव को कम किया जा सकता है।

कुशल जल प्रबंधनः ड्रिप सिंचाई, मल्चिंग और वर्षा जल संचयन जैसी तकनीकों को अपनाकर जल उपयोग दक्षता बढ़ाई जा सकती है।

एकीकृत पोषण एवं मृदा प्रबंधनः जैविक खाद, हरी खाद तथा आवश्यक पोषक तत्वों के संतुलित उपयोग से मृदा की उर्वरता एवं उत्पादकता को बनाए रखने में सहायता मिलती है।

अंतरवर्ती एवं बहुफसली खेतीः ताड़ के प्रारंभिक वर्षों में उपलब्ध स्थान पर दलहनी, सब्जी एवं अन्य उपयुक्त फसलों की खेती से अतिरिक्त आय प्राप्त की जा सकती है। इससे किसानों का आर्थिक जोखिम भी कम होता है।

अपशिष्ट का पुनर्चक्रणः ताड़ प्रसंस्करण से निकलने वाले पीओएमई तथा अन्य जैविक अवशेषों का समुचित उपचार एवं पुनर्चक्रण कर बायोगैस और कम्पोस्ट उत्पादन में उपयोग किया जा सकता है।

नीतिगत एवं संस्थागत सहयोगः ताड़ क्षेत्र के सतत विकास के लिए मूल्य स्थिरता, बीमा सुविधा, प्रसंस्करण अवसंरचना के विकास, गुणवत्तापूर्ण रोपण सामग्री तथा किसानों के तकनीकी प्रशिक्षण पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है।

ताड़ फसल देश में खाद्य तेलों का घरेलू उत्पादन बढ़ाने और आयात पर निर्भरता कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। इसकी उच्च तेल उत्पादकता, दीर्घ उत्पादन अवधि और आय की संभावनाएं इसे किसानों के लिए एक महत्वपूर्ण व्यावसायिक फसल बनाती हैं। हालांकि, इसका विस्तार क्षेत्रीय जल उपलब्धता, भूमि की उपयुक्तता और पर्यावरणीय संतुलन को ध्यान में रखते हुए योजनाबद्ध तरीके से किया जाना आवश्यक है।

लेखकों से अनुरोध

आज सूचना प्रौद्योगिकी के बदले हुए कदमों को हमारे पाठक और लेखक दोनों ने पहचाना है। पाठकगण लेखकों से सीधी बात कर सकें, इसलिए हम चाहते हैं कि सभी लेखक अपने लेख पोर्टल epatrika.icar.org.in में भेजने के साथ अपना ई-मेल पता तथा मोबाइल नम्बर अवश्य दें।

संपादक

फोग है शुष्क क्षेत्रों का उत्तम पशु चारा

प्रियंका गौतम[1], **शांतनु रक्षित**[2], **बनवारी लाल**[3], **बसंती ज्योत्सना**[4] और **वेद प्रकाश**[5]

फोग (*कैलिगोनम पॉलीगोनोइड्स* एल.) शुष्क एवं अर्ध-शुष्क क्षेत्रों की एक महत्वपूर्ण सूखा-सहिष्णु बहुवर्षीय झाड़ी है। यह चारे और ईंधन की लकड़ी का स्रोत होने के साथ-साथ बालू के टीलों के स्थिरीकरण तथा मरुस्थलीय पारिस्थितिकी तंत्र के संरक्षण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। पॉलीगोनेसी कुल से संबंधित फोग को स्थानीय रूप से 'फोगला', 'फोग' और 'फोगरो' आदि नामों से जाना जाता है। यह सामान्यत: 3-6 फीट ऊंची झाड़ी होती है। इसकी शाखाएं सफेद और नाजुक होती हैं तथा शीतकाल में इसकी पत्तियां झड़ जाती हैं। यह थार रेगिस्तान की अत्यधिक गर्मी, सूखे और कम तापमान जैसी प्रतिकूल परिस्थितियों को सहन करने में सक्षम है तथा क्षेत्र की प्रमुख जैवमास उत्पादक प्रजातियों में से एक है। फोग मुख्यत: लंबे, आड़े और अर्धवृत्ताकार बालू के टीलों पर उगती है तथा इसे सामोफाइटिक मरुस्थलीय वनस्पति समुदाय का एक प्रमुख घटक माना जाता है। फोग स्थानीय पारिस्थितिकी तंत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, जैसे कि बालू के टीलों को स्थिर करना, जैव विविधता का समर्थन करना और खासतौर पर ऊंटों के लिए मूल्यवान चारा प्रदान करना। पारंपरिक रूप से, इसका उपयोग स्वदेशी समुदायों द्वारा ईंधन और औषधीय उद्देश्यों के लिए किया जाता रहा है। फोग की सहनशीलता, उपयोगिता, और पारिस्थितिकीय मूल्य इसे रेगिस्तानी क्षेत्रों में एक महत्वपूर्ण प्रजाति बनाते हैं।

[1,4] एवं [5]वरिष्ठ वैज्ञानिक, राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर; [2]वैज्ञानिक, केन्द्रीय बागवानी परीक्षण केन्द्र, भुबनेश्वर, ओडिशा; [3]वरिष्ठ वैज्ञानिक, भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर (राजस्थान)

फोग रेगिस्तानी क्षेत्रों में पशुओं, विशेषकर ऊंटों के लिए एक महत्वपूर्ण चारा स्रोत है। सूखा सहिष्णु होने के कारण यह झाड़ी प्रतिकूल परिस्थितियों में भी हरी रहती है और ऐसे समय में उपलब्ध रहती है, जब अन्य वनस्पतियों की उपलब्धता कम हो जाती है। इसकी पौष्टिकता और रेशेदार प्रकृति इसे ऊंटों के लिए विशेष रूप से उपयोगी बनाती है। ऊंटों के अलावा बकरी और भेड़ भी इसे चारे के रूप में उपयोग करती हैं। मरुस्थलीय क्षेत्रों में फोग की उपलब्धता पशुओं के लिए अतिरिक्त चारे पर निर्भरता कम करने के साथ पशुधन की उत्पादकता बनाए रखने में सहायक होती है।

फोग में लगभग 12-16 प्रतिशत कच्चा प्रोटीन पाया जाता है, जो पशुओं की वृद्धि एवं उत्पादन के लिए महत्वपूर्ण है। इसमें रेशे की मात्रा भी अधिक होती है और कच्चा रेशा लगभग 30 प्रतिशत तक पाया जा सकता है। ऊंटों का पाचन तंत्र रेशेदार वनस्पतियों के उपयोग के लिए अनुकूलित होने के कारण फोग उनके लिए उपयोगी चारा सिद्ध होता है।

विभिन्न अध्ययनों में फोग की पाचनशीलता लगभग 60 प्रतिशत पाई गई है, जो पशुओं द्वारा इसके पोषक तत्वों के प्रभावी उपयोग को दर्शाती है। अध्ययनों में यह भी पाया गया है कि उपलब्ध अन्य चारा प्रजातियों की तुलना में ऊंट फोग को अधिक पसंद करते हैं। इस प्रकार, पोषण गुणवत्ता, उपलब्धता और सूखा-सहिष्णुता के कारण फोग शुष्क एवं मरुस्थलीय क्षेत्रों में पशुधन के लिए एक महत्वपूर्ण चारा संसाधन है।

प्राकृतिक प्रवर्धन

फोग का प्राकृतिक प्रसार मुख्यत: बीजों के माध्यम से होता है। हालांकि, इसके

सारणी: फोग की पत्तियों एवं फूल में चारा पोषण सांद्रता

चारा पोषण सांद्रता	पत्तियां (प्रतिशत)	फूल (प्रतिशत)
कार्बोहाइड्रेट	50-60	55-65
प्रोटीन	6-10	15-20
वसा	0.5-1.5	4-8
क्रूड फाइबर	20-25	10-15
कैल्शियम	0.5-1.0	2-3
फॉस्फोरस	0.3-0.6	0.4-0.8
पोटेशियम	2-5	3-5
सूक्ष्म खनिज तत्व	11-14	1-3

प्राकृतिक आवास की कठोर पर्यावरणीय परिस्थितियों के कारण पुनर्जनन की दर अपेक्षाकृत धीमी होती है। इसके बीज हवा अथवा पशुओं के माध्यम से एक स्थान से दूसरे स्थान तक फैलते हैं, लेकिन मरुस्थलीय क्षेत्रों में नमी की कमी और अधिक तापमान के कारण इनके अंकुरण एवं पौध स्थापना में कठिनाई आती है। इसके बावजूद, एक बार स्थापित हो जाने के बाद फोग का पौधा लंबे समय तक सूखे को सहन करने में सक्षम होता है तथा चराई या छंटाई के बाद पुनः वृद्धि कर सकता है।

कृत्रिम प्रसार

फोग में प्राकृतिक पुनर्जनन की दर धीमी होने के कारण इसके प्रसार को बढ़ाने के लिए कृत्रिम विधियों का उपयोग किया जाता है। ये विधियां विशेष रूप से बालू के टीलों के स्थिरीकरण और मरुस्थलीय पारिस्थितिकी तंत्र की पुनर्बहाली में उपयोगी हैं। फोग का कृत्रिम प्रसार मुख्यतः बीज, तने की कटिंग और जड़ सकर्स के माध्यम से किया जा सकता है।

बीज द्वारा प्रसार

फोग के बीजों को एकत्र कर सीधे रेतीली भूमि में बोया जा सकता है। बीजों का आवरण कठोर होने के कारण बुआई से पहले स्कैरिफिकेशन (बीज आवरण को यांत्रिक अथवा रासायनिक विधि से नरम करना) करने से अंकुरण में सुधार किया जा सकता है। बुआई का समय भी महत्वपूर्ण है। सामान्यतः वर्षा ऋतु की शुरुआत में बुआई करना उपयुक्त रहता है, ताकि अंकुरण के लिए मृदा में उपलब्ध नमी का लाभ मिल सके। अनियमित अथवा कम वर्षा वाले क्षेत्रों में पौधों की स्थापना के प्रारंभिक चरण में आवश्यकतानुसार सिंचाई की जा सकती है।

फोग की पौध

फोग में पुष्पण

तने की कटिंग द्वारा प्रसार

फोग का प्रसार तने की कटिंग से भी किया जा सकता है। इसके लिए स्वस्थ शाखाओं से कटिंग तैयार कर नम रेत में लगाई जाती है। बीज द्वारा प्रसार की तुलना में यह विधि अधिक उपयोगी हो सकती है, क्योंकि इसमें बीज अंकुरण की आवश्यकता नहीं होती। जड़ निर्माण को प्रोत्साहित करने के लिए उपयुक्त रूटिंग हार्मोन का प्रयोग किया जा सकता है। अधिक तापमान के तनाव से बचाने के लिए कटिंग को अपेक्षाकृत ठंडे महीनों में लगाना उपयुक्त रहता है।

जड़ सकर्स द्वारा प्रसार

सकर्स में प्राकृतिक रूप से जड़ सकर विकसित होते हैं। इन्हें मूल पौधे से सावधानीपूर्वक अलग कर नए स्थान पर लगाया जा सकता है। यह विधि विशेष रूप से बड़े पैमाने पर पुनर्बहाली एवं पौध स्थापना के लिए उपयोगी हो सकती है। मरुस्थलीय क्षेत्रों में क्षरित एवं रेतीली भूमि के पुनरुद्धार में भी फोग का उपयोग किया जाता है। इसके साथ ही चारा, ईंधन और अन्य उपयोगों के कारण इसका स्थानीय समुदायों के लिए सामाजिक-आर्थिक महत्व भी है।

पौध वृद्धि, छंटाई एवं उपज

फोग की झाड़ियां लगभग 4-5 वर्षों में अच्छी तरह विकसित हो जाती हैं। इस अवस्था में मई-जून के दौरान छंटाई तथा नवंबर में कटाई करके अधिक जैवभार प्राप्त किया जा सकता है। व्यावसायिक स्तर पर कटाई लगभग 6-7 वर्षों बाद शुरू की जा सकती है तथा विकसित पौधे से लगभग 12-15 कि.ग्रा. जैवभार प्रति वर्ष प्राप्त किया जा सकता है।

वर्षा आधारित एवं कम तापमान वाली परिस्थितियों में फोग दिसंबर के आसपास पत्तियां गिराकर पर्णपाती व्यवहार प्रदर्शित करती है। वसंत ऋतु के आरंभ में पौधों में पुनः वृद्धि शुरू होती है और गर्मियों के महीनों में इनमें पुष्पण होता है। इसकी कटाई सामान्यतः मार्च के मध्य से अप्रैल के प्रथम सप्ताह के बीच की जाती है। इस अवधि में प्रति पौधा लगभग 0.5-1.0 कि.ग्रा. चारा प्राप्त किया जा सकता है। फूल एवं कलियों के विकास में दिन और रात के तापमान का महत्वपूर्ण प्रभाव होता है।

रोपण दूरी एवं उत्पादन

फोग को रेतीली भूमि में वृक्षों अथवा मौसमी फसलों के साथ समन्वित रूप से लगाया जा सकता है। इसके लिए पौधों के बीच लगभग 5×5 मीटर की दूरी रखी जा सकती है। उपयुक्त प्रबंधन के अंतर्गत इससे प्रति वर्ष लगभग 45-60 क्विंटल हरा चारा प्रति हैक्टर तथा 200-300 कि.ग्रा. फोग प्रति हैक्टर प्राप्त किया जा सकता है।

इस प्रकार फोग मरुस्थलीय पारिस्थितिकी तंत्र की एक महत्वपूर्ण प्रजाति है, जिसका पारिस्थितिक, आर्थिक और सामाजिक-सांस्कृतिक दृष्टि से विशेष महत्व है। इसके साथ ही, फोग ऊंटों सहित अन्य पशुओं के लिए उपयोगी चारे का स्रोत है, जिससे मरुस्थलीय क्षेत्रों में पशुपालन आधारित आजीविका को सहारा मिलता है।

फोग में उपलब्ध रेशा और प्रोटीन जैसे पोषक तत्व इसकी चारा उपयोगिता को बढ़ाते हैं। विशेष रूप से शुष्क एवं चारे की कमी वाले क्षेत्रों में यह झाड़ी ऊंटों के लिए एक उपयोगी आहार स्रोत के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

सितम्बर के मुख्य कृषि कार्य

राजीव कुमार सिंह[1], अवनीश प्रकाश सिंह[2], अंजली पटेल[3], विनय उपाध्याय[4], कपिला शेखावत[1] और आदित्य सिंह[1]

" सितम्बर खरीफ फसलों, सब्जियों और बागवानी फसलों के प्रबंधन की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण माह है। इस समय धान्य, दलहनी, तिलहनी, नकदी एवं चारा फसलें खेतों में बढ़वार की अवस्था में होती हैं, वहीं तोरिया की बुआई का उपयुक्त समय भी प्रारंभ हो जाता है। इस समय वर्षा और अधिक आर्द्रता के कारण फसलों में कीट एवं रोगों का प्रकोप बढ़ने की आशंका रहती है। ऐसे में समय पर सिंचाई, खरपतवार नियंत्रण, पोषक तत्व प्रबंधन तथा कीट-रोग नियंत्रण आवश्यक है। बदलती जलवायु और मौसम की अनिश्चितताओं को देखते हुए किसानों को तापमान, वर्षा एवं अन्य मौसम पूर्वानुमानों के आधार पर कृषि कार्यों की योजना बनानी चाहिए। मौसम आधारित कृषि परामर्श पूसा संस्थान के वेब पेज पर भी उपलब्ध हैं। प्रस्तुत लेख में सितम्बर माह के दौरान देश के विभिन्न कृषि क्षेत्रों में किए जाने वाले प्रमुख कृषि कार्यों की जानकारी दी गई है, ताकि किसान समय पर उचित सस्य प्रबंधन अपनाकर लागत में कमी और बेहतर उत्पादन सुनिश्चित कर सकें। "

सितम्बर माह, जिसे भादो भी कहा जाता है, खरीफ फसलों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। इस समय वर्षा और वातावरण में नमी के कारण इस अवधि में फसलों पर कीटों एवं रोगों का प्रकोप बढ़ने की आशंका रहती है। इसलिए फसलों की नियमित निगरानी और समय पर उचित प्रबंधन आवश्यक है।

सब्जी, फल एवं पुष्प उत्पादन की दृष्टि से भी यह माह महत्वपूर्ण है। इस दौरान टमाटर, फूलगोभी, पत्तागोभी, बैंगन, मिर्च, मूली और गाजर आदि की खेती से संबंधित विभिन्न कार्य किए जाते हैं। भिंडी और बरबटी जैसी तैयार सब्जी फसलों की समय पर तुड़ाई की जाती है। साथ ही, आम के नवरोपित पौधों की उचित देखभाल एवं सुरक्षा तथा अमरूद के बागों

[1]सस्य विज्ञान संभाग, भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली-110012; [2]कृषि विभाग, दक्षिण बिहार केंद्रीय विश्वविद्यालय, गया (बिहार); [3]सस्य विज्ञान विभाग, इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर-492012 (छत्तीसगढ़); [4]सस्य विज्ञान विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

में आवश्यकतानुसार सिंचाई एवं अन्य प्रबंधन कार्य किए जाते हैं।

क्षेत्र, जलवायु, मृदा और फसल की अवस्था के अनुसार सिंचाई, खरपतवार नियंत्रण, पोषक तत्व प्रबंधन तथा कीट एवं रोगों का समय पर नियंत्रण बेहतर उत्पादन के लिए आवश्यक है। तैयार फसलों की उचित समय पर कटाई-मड़ाई और सुरक्षित भंडारण पर भी इस समय विशेष ध्यान देना चाहिए। इसके साथ ही आगामी फसलों के लिए खेत की तैयारी तथा बीज एवं अन्य कृषि आदानों की समय रहते व्यवस्था करना लाभकारी रहता है। इसी परिप्रेक्ष्य में इस माह विभिन्न फसलों में किए जाने वाले कृषि कार्य इस प्रकार है:

धान

जल प्रबंधन

बालियां तथा फूल निकलने की अवस्था में खेत में पर्याप्त नमी बनाए रखें तथा आवश्यकतानुसार सिंचाई करें।

पोषक तत्व प्रबंधन

धान की फसल में नाइट्रोजन की दूसरी एवं अंतिम मात्रा टॉप ड्रेसिंग के रूप में 50-55 दिनों बाद अर्थात बाली बनने की प्रारंभिक अवस्था में दें। अधिक उपज देने वाली उन्नत प्रजातियों में 30 कि.ग्रा. तथा सुगंधित प्रजातियों में 15 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हैक्टर की दर से प्रयोग करें। ध्यान रखें कि टॉप ड्रेसिंग करते समय खेत में 2-3 सें.मी. से अधिक पानी नहीं होना चाहिए।

कीट नियंत्रण

पत्ती लपेटक कीट

इस कीट की सुंडी पौधों की कोमल पत्तियों को सिरे की ओर से लपेटकर सुरंग जैसी संरचना बना लेती है और उसके अंदर रहकर पत्तियों के हरे भाग को खाती रहती है। इसके प्रकोप से पत्तियों का हरा रंग फीका पड़ जाता है तथा वे सिरे की ओर से सूखने लगती हैं।

तना छेदक कीट का प्रकोप

नियंत्रण

वयस्क कीटों को प्रकाश प्रपंच की सहायता से एकत्र कर नष्ट किया जा सकता है। अंडों पर भक्षी ट्राइकोग्रामा काइलोनिस का 1,00,000-1,50,000 प्रति हैक्टर की दर से प्रयोग करें। इसके अतिरिक्त कार्टैप हाइड्रोक्लोराइड 4 जी 25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर या कार्टैप हाइड्रोक्लोराइड 50 एस.पी. 1 मि.ली. प्रति लीटर या क्विनालफॉस 25 ई.सी. 2 मि.ली. प्रति लीटर या क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. 2 मि.ली. प्रति लीटर या एसीफेट 75 एस.पी. 2 ग्राम प्रति लीटर या मोनोक्रोटोफॉस 2 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से प्रयोग करें।

पत्ती लपेटक कीट का आक्रमण

तनाछेदक कीट

लक्षण

पीला तनाछेदक धान का एक प्रमुख कीट है। इसकी सुंडी फसल को नुकसान पहुंचाती है। फसल की प्रारंभिक अवस्था में सुंडी तने के अंदर प्रवेश कर आंतरिक भाग को खाती है, जिससे बीच की पत्ती अथवा मुख्य प्ररोह सूख जाता है। इस लक्षण को 'डेड हार्ट' कहा जाता है।

नियंत्रण

वयस्क कीटों को प्रकाश प्रपंच की सहायता से आकर्षित कर नष्ट किया जा सकता है। रोपाई के 30 दिनों बाद से ट्राइकोकार्ड 1-1.5 लाख अंडे प्रति हैक्टर प्रति सप्ताह की दर से 2-6 सप्ताह तक प्रयोग करें। इसके अतिरिक्त, यदि डेड हार्ट की संख्या 5 प्रतिशत या उससे अधिक हो जाए, तो नियंत्रण के लिए कार्बोफ्यूरॉन 3 जी 20 कि.ग्रा. या डाइमेक्रॉन 590 मि.ली. या मोनोक्रोटोफॉस 36 ई.सी. 1.4 लीटर या कार्टैप हाइड्रोक्लोराइड 4 जी 25 कि.ग्रा. या

क्विनालफॉस 5 जी 20 कि.ग्रा. या फोरेट 10 जी 10 कि.ग्रा. या एसीफेट 75 एस.पी. 2 ग्राम प्रति लीटर या फ्यूराडॉन 3 जी 25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर अथवा क्विनालफॉस 20 ई.सी. 2 मि.ली. प्रति लीटर की दर से प्रयोग करें। तरल कीटनाशक के प्रयोग की स्थिति में अनुशंसित मात्रा को 500-700 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

रोग प्रबंधन

पत्ती का जीवाणु झुलसा

यह रोग जीवाणु द्वारा होता है। पौधों की छोटी अवस्था से लेकर परिपक्व अवस्था तक यह रोग कभी भी हो सकता है। इस रोग में पत्तियों के किनारे ऊपरी भाग से शुरू होकर मध्य भाग तक सूखने लगते हैं। सूखे पीले पत्तों के साथ-साथ राख के रंग के चकत्ते भी दिखाई देते हैं। संक्रमण की उग्र अवस्था में पूरी पत्ती सूख जाती है।

नियंत्रण

रोग की रोकथाम के लिए 2.5 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन- 25 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड प्रति 10 लीटर पानी के घोल में बीज को 12 घंटे तक डुबोना चाहिए। नाइट्रोजन उर्वरक का प्रयोग कम कर दें तथा जिस खेत में रोग लगा हो, उसका पानी दूसरे खेत में न जाने दें। इससे रोग फैलने की आशंका कम हो जाती है। साथ ही खेत से समुचित जल निकास की व्यवस्था की जानी चाहिए।

इसके अतिरिक्त, 74 ग्राम एग्रीमाइसीन-100 और 500 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड को 500-600 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर की दर से तीन-चार बार छिड़काव करें। पहला छिड़काव रोग प्रकट होने पर तथा आवश्यकतानुसार 10 दिनों के अंतराल पर करें। रोग सहिष्णु किस्में जैसे पन्त धान-4, पन्त धान-12, रत्ना, गोविन्द व मनहर आदि का प्रयोग करना चाहिए।

पत्ती का जीवाणु झुलसा

भूरी चितेरी

इस रोग के लक्षण मुख्यत: पत्तियों तथा पर्णच्छदों पर छोटे-छोटे भूरे रंग के धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं। अधिक संक्रमण होने पर ये धब्बे आपस में मिलकर पत्तियों को सुखा देते हैं और बालियां पूर्ण रूप से बाहर नहीं निकलती हैं।

नियंत्रण

इस रोग की रोकथाम हेतु बीजों को थीरम 2.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करके बुआई करें या जिंक मैंगनीज कार्बोनेट 75 प्रतिशत के 2 कि.ग्रा. को 800 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर छिड़काव करें।

फॉल्स स्मट

धान की फसल पकते समय नसवार जैसे दाने धान के दानों के साथ लग जाते हैं, जिससे फसल की उपज पर गहरा प्रभाव पड़ता है। रोगग्रस्त दाने आकार में सामान्य दानों से दोगुने या 5-6 गुने होते हैं। रोग को कम करने के लिए 500 ग्राम मैंकोजेब या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड को 200 लीटर पानी में प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करना चाहिए।

मक्का

जल प्रबंधन

मक्का की फसल में अधिक वर्षा होने की स्थिति में खेत से जल-निकास की व्यवस्था अवश्य करें। फसल में नर मंजरी निकलने की अवस्था एवं दाने की दूधियावस्था सिंचाई की दृष्टि से विशेष महत्वपूर्ण हैं। यदि विगत दिनों में वर्षा न हुई हो या नमी की कमी हो तो सिंचाई अवश्य करें।

गंधी बग कीट की रोकथाम

यह धान का प्रमुख कीट है, जो खेत में दुर्गंध उत्पन्न करता है, इसलिए इसे गंधी बग कहते हैं। धूप के समय ये कीट पौधे के छाया वाले हिस्से में रहते हैं। मादा पत्ती पर एक रेखा में अंडे देती है। अंडे गोल तथा भूरे रंग के होते हैं। ये 6-7 दिनों में शिशु अंडों से बाहर निकल आते हैं। वयस्क तथा शिशु दोनों ही दूधिया अवस्था में दानों से रस चूसकर उन्हें खाली कर देते हैं। ग्रसित दानों पर काली फफूंद के साथ काले या भूरे धब्बे दिखाई देते हैं। जल्दी पकने वाली प्रजातियों की तुलना में देर से पकने वाली प्रजातियां इसका ज्यादा शिकार होती हैं। इस कीट के अधिक प्रकोप से लगभग 50 प्रतिशत तक नुकसान हो सकता है।

नियंत्रण

गंधी बग की रोकथाम हेतु नाइट्रोजन खाद का संतुलित प्रयोग करें। एक क्षेत्र के खेतों में बुआई तथा रोपाई एक ही समय पर करें। आवश्यकतानुसार मैलाथियॉन 50 ई.सी. 2 मि.ली. या एसीफेट 75 एस.पी. 2 ग्राम प्रति लीटर या क्विनालफॉस 25 ई.सी. 2 मि.ली. प्रति लीटर या डी.डी.वी.पी. 76 ई.सी. 1.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें या मैलाथियॉन पाउडर 25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें।

भूरा पादप फुदका

ये कीट भूरे रंग के होते हैं और पौधों की निचली सतह पर कल्लों के बीच रहकर तने व पत्तियों का रस चूसते हैं।

नियंत्रण

नाइट्रोजन का सीमित प्रयोग करें तथा खेत में लगातार पानी भरकर न रखें। आवश्यकतानुसार नीम तेल 1.5 लीटर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें या इमिडाक्लोरोप्रिड 17.8 एस.एल. 1 मि.ली. प्रति 3 लीटर पानी या बुप्रोफेजिन 25 एस.एल. 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी या क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. 2 मि.ली. प्रति लीटर पानी या दानेदार कार्बोफ्यूरॉन 3 जी 25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें।

पौध संरक्षण

तनाभेदक

यह मक्के के लिए सबसे अधिक हानिकारक कीट है। इसकी सुंडियां 20-25 मि.मी. लंबी और स्लेटी-सफेद रंग की होती हैं, जिनका सिर काला होता है और चार लंबी भूरे रंग की लाइनें होती हैं। इसकी सुंडियां तनों में सुराग करके पौधों को खा जाती हैं, जिससे छोटी फसल में पौधों की गोभ सूख जाती है। बड़े पौधों में ये बीच के पत्तों पर सुराग बना देती हैं। इस कीट के आक्रमण से पौधे कमजोर हो जाते हैं और पैदावार बहुत कम हो जाती है।

नियंत्रण

तनाभेदक कीट के नियंत्रण के लिए कार्बोफ्यूरॉन 3 जी 20 कि.ग्रा. अथवा फोरेट 10 जी 20 कि.ग्रा. अथवा डाइमेथोएट 30 ई.सी. 1.0 लीटर अथवा क्विनालफॉस 25 ई.सी. 1.50 लीटर अथवा मोनोक्रोटोफॉस 36 एस.एल. की 1.25 लीटर मात्रा को प्रति हैक्टर की दर से 500-600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

फॉल आर्मीवर्म

युवा लार्वा पत्ती की सतह को खुरचते हैं और बड़े लार्वा पौधे के केंद्रीय भाग को खाते हैं, जिससे व्यापक रूप से पत्तियां झड़ जाती हैं। नर मंजरी व भुट्टे भी लार्वा द्वारा खाए जाते हैं।

नियंत्रण

अंतिम जुताई के समय 250 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से नीम की खली डालें। 4 मि.ली. प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से सायन्ट्रानिलिप्रोल 19.8 प्रतिशत . थायोमेथोक्साम 19.8 प्रतिशत एफ.एस. से बीज उपचार करें। 3 पंक्तियों में लोबिया, तिल, चना या सूरजमुखी और चारा ज्वार की सीमांत फसल उगाएं। 12 नग प्रति हैक्टर की दर से फॉल आर्मीवर्म (एफएडब्ल्यू) फेरोमोन ट्रैप लगाएं। प्रारंभिक अवस्था (15-20 दिनों) पर एजाडिरेक्टिन 1500 पीपीएम 2.5 लीटर प्रति हैक्टर या क्लोरेंट्रानिलिप्रोल 18.5 एस.सी. 200 मि.ली. प्रति हैक्टर या फ्लूबेंडियामाइड 480 एस.सी. 250 मि.ली. प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें।

इसके अतिरिक्त मेटाराइजियम एनिसोप्लाई 2.5 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर या

धान का झोंका (ब्लास्ट)

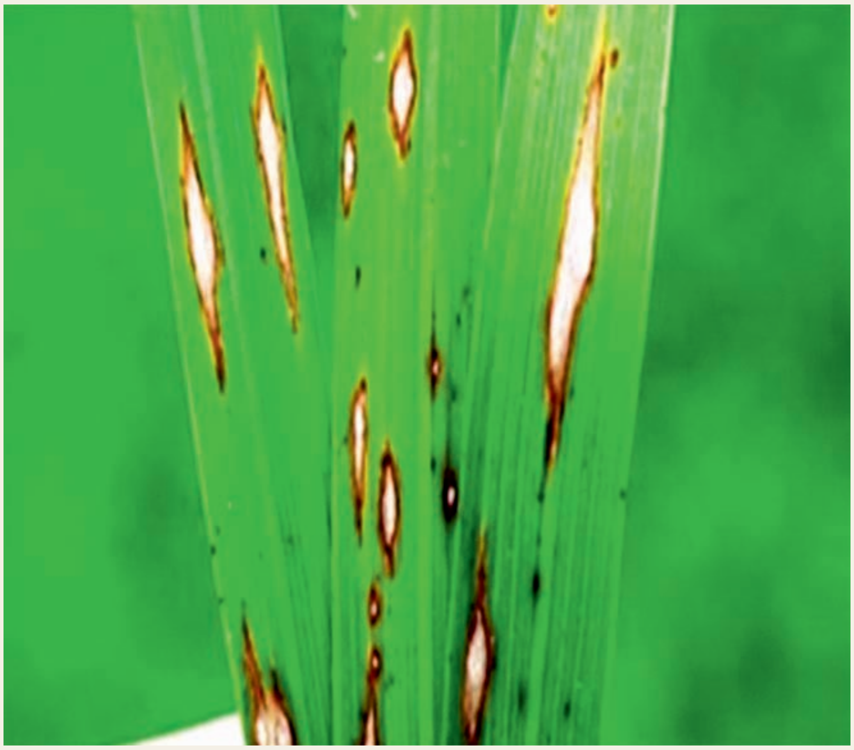

यह रोग फफूंद से फैलता है तथा पौधे के सभी भाग इस रोग से प्रभावित होते हैं। इस रोग का प्रकोप जुलाई-सितम्बर में अधिक होता है। असिंचित धान में इस रोग का प्रकोप बहुत अधिक होता है। इससे पत्तियां झुलसकर सूख जाती हैं। गांठों पर भी भूरे रंग के धब्बे बनते हैं, जिससे समुचित पौधे को नुकसान होता है और गांठ के चारों ओर फफूंद घेर लेने से पौधे टूट जाते हैं। बालियों के निचले डंठल पर धूसर-बादामी रंग के क्षतिस्थल बनते हैं।

नियंत्रण

इस रोग के नियंत्रण के लिए बुआई से पूर्व बीज को ट्राइसाइक्लेजोल 2.0 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें तथा दौजियां निकलने और पुष्पण की अवस्था में जरूरत पड़ने पर कार्बेण्डाजिम (0.1 प्रतिशत) का छिड़काव करें या खड़ी फसल में 250 ग्राम कार्बेण्डाजिम व 1.25 कि.ग्रा. इण्डोफिल एम-45 को 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

इसके अतिरिक्त, रोग के लक्षण दिखाई देने पर 10-12 दिन के अंतराल पर या बाली निकलते समय दो बार आवश्यकतानुसार कार्बेण्डाजिम 50 प्रतिशत घुलनशील पाउडर की 15-20 ग्राम मात्रा को लगभग 15 लीटर पानी में घोल बनाकर सिंचाई की नालियों में प्रयोग करें। झोंका अवरोधी प्रजातियां जैसे वी.एल. धान-206, मझेरा-7 (चेतकी धान), वी.एल. धान-163, वी.एल. धान-221 (जेठी धान), वी.एल. धान-61 आदि का उपयोग सिंचित क्षेत्रों में मध्यकालीन बुआई हेतु करें।

गर्दन तोड़

इस रोग को गर्दन तोड़ रोग के नाम से भी जाना जाता है। यूरिया के अधिक प्रयोग एवं तापमान गिरने के कारण यह रोग उत्पन्न होता है। वातावरण में अधिक नमी होने पर यह रोग तेजी से फैलता है। इस रोग की शुरुआत में पत्तियों पर नीले या बैंगनी रंग के धब्बे उभरने लगते हैं। कुछ समय बाद धब्बों के आकार में वृद्धि होती है और पत्तियां सूख जाती हैं। तने की गांठें काले रंग की हो जाती हैं। बालियां सफेद हो जाती हैं और बालियों में दाने नहीं बनते हैं। कुछ समय बाद बालियां टूटकर लटक जाती हैं।

नियंत्रण

बीज उपचार के लिए बाविस्टीन 2 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से प्रयोग करें। यह रोग दिखाई देते ही कार्बेण्डाजिम 1 ग्राम प्रति लीटर या हीमोसान 1 मि.ली. दवा प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें एवं दूसरा छिड़काव 7-10 दिनों बाद करें।

एमामेक्टिन बेंजोएट 5 एस.जी. 200 ग्राम प्रति हैक्टर या नोवाल्यूरॉन 10 ई.सी. 750 मि.ली. प्रति हैक्टर या स्पाइनेटोरम 11.7 एस.सी. 250 मि.ली. प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें।

तुलासिता

इस रोग में पत्तियों पर पीली धारियां पड़ जाती हैं। पत्तियों की निचली सतह पर सफेद रुई के समान फफूंद दिखाई देती है। ये धब्बे बाद में गहरे अथवा लाल-भूरे पड़ जाते हैं। रोगी पौधों में भुट्टे कम बनते हैं या बनते ही नहीं हैं और पौधे बौने एवं झाड़ीनुमा हो जाते हैं।

नियंत्रण

इसकी रोकथाम के लिए जिंक मैंग्नीज कार्बमेट या जीरम 80 प्रतिशत 2.0 कि.ग्रा. अथवा 27 प्रतिशत के तीन लीटर प्रति हैक्टर की दर से पानी की आवश्यक मात्रा में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

बेबीकॉर्न एवं स्वीटकॉर्न की तुड़ाई

अधिक गुणवत्ता वाली बेबीकॉर्न के लिए इनकी तुड़ाई सिल्क निकलने के 2-3 दिन के अंतराल पर ही करें तथा स्वीटकॉर्न में रेशा निकलने के लगभग 20-22 दिनों बाद वाली अवस्था तुड़ाई के लिए उपयुक्त है, क्योंकि इस समय इनमें शर्करा की मात्रा सबसे अधिक होती है।

ज्वार

सिंचाई

ज्वार से अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए वर्षा न होने या नमी की कमी होने पर बाली निकलने के समय तथा दाना भरते समय सिंचाई अवश्य करें।

नई प्रजाति पूसा जवाहर संकर मक्का-2

पौध संरक्षण

माहूं

इस कीट के शिशु एवं वयस्क पौधों का रस चूसते रहते हैं, जिससे पौधों की पत्तियों के किनारे पर पीली-नीली धारियां दिखाई पड़ती हैं। इस कीट के प्रकोप से तरल द्रव बनने लगता है, जिससे फसल पर फफूंद का आक्रमण होने लगता है और दाने की गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

नियंत्रण

इसकी रोकथाम के लिए मेटासिस्टॉक्स 25 ई.सी. की 1.0 लीटर मात्रा को प्रति हैक्टर की दर से 500-600 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

अर्गट रोग

यह रोग स्फैसेलिया सॉरघाई नामक कवक द्वारा फैलता है। संकर ज्वार में इस रोग का प्रकोप अधिक होता है। इस रोग के बीजाणु हवा द्वारा फैलते हैं तथा रोग का प्रकोप फसल में भुट्टा लगने के समय होता है। पुष्प शाखा पर स्थित स्पाइकिल से हल्के गुलाबी रंग का गाढ़ा व चिपचिपा शहद जैसा पदार्थ निकलता है, जो मनुष्य तथा पशुओं दोनों के लिए हानिकारक होता है।

नियंत्रण

अर्गट रोग से ग्रसित भुट्टों को काटकर जला देना चाहिए। भुट्टों में दाना बनने की अवस्था पर थीरम का 0.2 प्रतिशत घोल बनाकर फूल आने के समय 7-10 दिनों के अंतराल पर 2-3 छिड़काव करके रोग के प्रभाव को काफी हद तक कम किया जा सकता है। दूसरे छिड़काव के समय उक्त दवा के साथ 0.1 प्रतिशत कार्बेरिल नामक कीटनाशी भी मिला देना चाहिए।

कंडुवा रोग

यह ज्वार का सबसे हानिकारक कवकजनित रोग है। इसका प्रकोप पौधे में भुट्टे निकलते समय होता है। यह मुख्यत: बीज द्वारा फैलता है। इस कवक के बीजाणु अंकुरण के समय जड़ों द्वारा पौधों में प्रवेश कर जाते हैं। पौधों में भुट्टे आने पर दानों की जगह कवक के काले बीजाणु भर जाते हैं। बीजाणु बाहर से एक कड़ी झिल्लीदार परत से ढके रहते हैं, जिसके फटने पर वे बाहर आकर फैल जाते हैं।

नियंत्रण

इसकी रोकथाम के लिए बीज को किसी कवकनाशी दवा जैसे- वीटावैक्स पावर या कैप्टॉन से 2.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करके बुआई करें।

बाजरे की उन्नत प्रजाति

कटाई

ज्वार की फसल पकने पर भुट्टे के हरे दाने सफेद या पीले रंग में बदल जाते हैं। भुट्टों में दानों के अंदर जब नमी घटकर 20 प्रतिशत तक रह जाए तो फसल की कटाई कर लेनी चाहिए। संकर ज्वार में फसल पकने तक पौधे हरे बने रहते हैं। अत: खड़ी फसल से भुट्टों की कटाई हंसिया या दरांती से करके फसल को चारे के रूप में खिलाते रहते हैं। पौधों से भुट्टे अलग करने के बाद पौधों को सुखाकर सूखे चारे के रूप में रखा जाता है।

बाजरा

टॉप ड्रेसिंग

यदि फसल देर से बोई गई हो, तो बाजरा की संकर प्रजातियों में नाइट्रोजन की शेष आधी मात्रा यानी 40-50 कि.ग्रा. की टॉप ड्रेसिंग बुआई के 25-30 दिनों बाद करें।

पौध संरक्षण

ग्रेन मिज

इस कीट का असर बालियां आते समय देखा गया है। रोकथाम हेतु इसके साथ-साथ पत्तियों को खाने वाले कीटों का असर भी दिखाई दे तो 3 प्रतिशत फोरेट को 25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से पाउडर के रूप में छिड़कना चाहिए।

अर्गट रोग

यह केवल भुट्टों के कुछ दानों पर ही दिखाई देता है। इसमें दाने के स्थान पर भूरे-काले रंग की सींक के आकार की गांठें बन जाती हैं, जिन्हें स्केलेरोशिया कहते हैं।

अरहर की स्वस्थ फसल

संक्रमित फूलों में फफूंद विकसित होती है, जिनमें बाद में मधुरस निकलता है। प्रभावित दाने मनुष्य एवं पशुओं के लिए हानिकारक होते हैं।

नियंत्रण

इस रोग की रोकथाम हेतु जीरम 80 प्रतिशत घुलनशील चूर्ण 2 कि.ग्रा. अथवा मैंकोजेब 75 प्रतिशत डब्ल्यू.पी. 2.0 कि.ग्रा. अथवा रिडोमिल 25 डब्ल्यू.पी. (1000 पीपीएम) बुआई के 20-25 दिनों बाद प्रति हैक्टर 500-600 लीटर पानी में घोलकर 10 दिनों के अंतराल पर 2 छिड़काव करना चाहिए।

हरित बाली

यह फफूंद से उत्पन्न होने वाला रोग है। इसके प्रभाव से पत्तियों का रंग पीला पड़ जाता है, पौधों की बढ़वार रुक जाती है। सुबह के समय पत्तियों की निचली सतह पर एक सफेद पाउडर जैसा पदार्थ दिखाई देता है। यह रोग फसल पर बालियां आने की अवस्था में आक्रमण करता है। अत: इसे हरी बालियों वाली रोग कहते हैं। इसमें बालियों पर दानों के स्थान पर छोटी-छोटी हरी पत्तियां उग आती हैं।

मूंग की स्वस्थ उपज

नियंत्रण

खेत में रोगग्रस्त पौधों को समय-समय पर उखाड़कर जला देना चाहिए। बुआई से पूर्व बीजों को अप्रोन-35 एस.डी. या रिडोमिल एम जेड-72 से 3 ग्राम प्रति कि.ग्रा. की दर से उपचारित करें। रोग की व्यापकता को कम करने के लिए रोग के प्रारंभिक लक्षण दिखाई देते ही कवकनाशी रिडोमिल एमजेड-72 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

कटाई

जब फसल पककर तैयार हो जाए, तो उस अवस्था में बालियों को काटकर अलग कर लेना चाहिए। इन बालियों को एक जगह खलिहान में इकट्ठा करके सुखा लें और थ्रेसर से दाना अलग कर लें।

मूंग, उड़द और अरहर

जल प्रबंधन

कलियां बनते समय वर्षा न होने की स्थिति में खेत में पर्याप्त नमी रखने के लिए सिंचाई करें।

पौध संरक्षण

फली बग

इस कीट के प्रौढ़ एवं निम्फ पत्तियों, कलियों, फूलों तथा फलियों का रस चूसते

अरहर की फलीबेधक मक्खी

उत्तरी भारत में इस कीट द्वारा अरहर की फसल को काफी हानि पहुंचती है। इस कीट द्वारा प्रतिवर्ष अरहर की फसल को 20-25 प्रतिशत तक नुकसान होता है। इसके नियंत्रण के लिए नीम के बीज की गिरी का पाउडर (5 प्रतिशत) या नीम का तेल (80 ई.सी. 2 मि.ली. प्रति लीटर पानी) का छिड़काव करें। खेत में पक्षियों के बैठने के लिए टी-आकार की खूंटियां (बर्ड पर्चेस) लगाएं, ताकि पक्षी कीटों को खा सकें। कीटों की संख्या की निगरानी और रोकथाम के लिए खेत में फेरोमोन ट्रैप लगाएं। मोनोक्रोटोफॉस (0.04 प्रतिशत घोल) का छिड़काव करना चाहिए।

हैं, जिससे फलियां सिकुड़ जाती हैं और सही तरीके से नहीं बन पाती हैं।

नियंत्रण

इसके नियंत्रण के लिए मोनोक्रोटोफॉस (0.04 प्रतिशत घोल) या डाइमेथोएट (0.03 प्रतिशत घोल) का छिड़काव करना चाहिए।

चना फलीबेधक

इस कीट के लार्वा पौधे के विभिन्न भागों, जैसे पत्तियों, फूलों और फलियों को खाकर नुकसान पहुंचाते हैं। युवा लार्वा मुख्य रूप से क्लोरोफिल खाकर पत्तियों को कंकालनुमा बना देते हैं। जैसे-जैसे वे बड़े होते हैं, लार्वा फलियों में छेद कर देते हैं,

सूरजमुखी

जल प्रबंधन

फसल में वर्षा न होने की स्थिति में शीर्ष बनते एवं दाना भरते समय आवश्यकतानुसार हल्की सिंचाई करें।

परागण विनियमन

सूरजमुखी से अधिक उपज लेने के लिए मधुमक्खी के डिब्बों को खेत के किनारे रखें, यह परागण में मददगार है। मधुमक्खी पालन न करने की स्थिति में सूरजमुखी में अच्छी तरह फूल आ जाने पर हाथ में दस्ताने पहनकर या किसी मुलायम रोयेंदार कपड़े को लेकर फूल के मुंडक पर चारों ओर धीरे से घुमा दें। यह क्रिया प्रातःकाल 7.30 बजे तक कर लें।

पौध संरक्षण

सूरजमुखी में शीर्ष सड़न, जिसमें पहले तने व फिर मुंडकों पर काले धब्बे बनते हैं, की रोकथाम हेतु मैंकोजेब 0.3 प्रतिशत का मुंडक बनते समय छिड़काव करें। साथ ही मुंडकों को चिड़ियों से बचाने के लिए रंगीन चमकीली पन्नियों को फसल से आधे से एक मीटर ऊपर बांधकर सुरक्षा करें।

चारा फसलें

जल, नाइट्रोजन व कटाई प्रबंधन

ज्वार, बाजरा, मक्का, ग्वार आदि चारे वाली फसलों में वर्षा न होने अथवा सूखे की स्थिति होने पर हल्की सिंचाई अवश्य करनी चाहिए। बहुवर्षीय घासों में कटाई के पश्चात 30-40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हैक्टर का छिड़काव अवश्य करें। पशुधन की आवश्यकतानुसार बहुवर्षीय नेपियर, गिनी, सिटेरिया की कटाई करें। वर्षा के जल की पर्याप्त उपलब्धता बने रहने पर भी इन घासों को स्वयं के ज्ञान के आधार पर अंतराल निर्धारित कर आवश्यकतानुसार पानी लगाएं और बराबर कटाई करते रहें।

बरसीम की बुआई

सितम्बर में लगी फसल से नवम्बर से मई तक 4-6 कटाइयों में 300-370 क्विंटल हरा चारा प्राप्त हो जाता है, जिसे पशु बड़े चाव से खाते हैं तथा अधिक दूध देते हैं। इसे हल्की खारी मृदा में भी उगाया जा सकता है। बरसीम की प्रजाति टी-5, टी-26, टी-780, वरदान, मेस्कावी आदि की बुआई मध्य सितम्बर से 30 नवम्बर तक कर दें। बरसीम का 25-30 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर की दर से प्रयोग करें। बुआई से पूर्व बीज को राइजोबियम मिश्रण से उपचारित करें। बरसीम की फसल की बुआई के समय 25 कि.ग्रा. नाइट्रोजन व 50 कि.ग्रा. फॉस्फोरस का प्रयोग करें।

विकसित हो रहे बीजों को खाते हैं और उपज में भारी नुकसान पहुंचाते हैं।

इसके नियंत्रण के लिए सबसे पहले यौन आकर्षण जाल (फेरोमोन ट्रैप) द्वारा नियमित निगरानी करते रहें। जैसे ही 5-6 नर कीट प्रति ट्रैप 24 घंटे के अंदर मिलना शुरू हो जाएं, नियंत्रण तकनीक अपनाएं। एन.पी.वी. 250 लार्वा तुल्य का छिड़काव करें एवं परभक्षियों के लिए खेत में टी-आकार की लकड़ी लगा दें। इसके साथ ही नीम की निबौली के सत का 5 प्रतिशत घोल का छिड़काव लाभदायक सिद्ध हुआ है।

रासायनिक नियंत्रण के लिए इन्डोक्साकार्ब 1 मि.ली. प्रति लीटर या मोनोक्रोटोफॉस (0.04 प्रतिशत) प्रति लीटर पानी का प्रथम छिड़काव या मिथाइल डिमेटॉन 0.05 प्रतिशत का प्रयोग या क्विनालफॉस (25 ई.सी.) की 1.25 लीटर मात्रा को 800 लीटर

पानी में घोलकर एक हैक्टर में छिड़काव करें।

पीला मोजैक

यह रोग मूंग की रोगग्राही प्रजातियों में अधिक व्यापक होता है। जिन पत्तियों में पीली कुर्बरता (मोजैक) या पीली ऊतकक्षय कुर्बरता के मिले-जुले लक्षण दिखाई देते हैं, उनके आकार छोटे रह जाते हैं। ऐसे पौधों में बहुत कम व छोटी फलियां होती हैं। ऐसी फलियों का बीज सिकुड़ा हुआ और मोटा व छोटा होता है। यह रोग सफेद मक्खी द्वारा फैलता है।

इसके नियंत्रण के लिए खेत में ज्यों ही रोगी पौधे दिखाई दें, थायमेथोक्साम या इमिडाक्लोप्रिड 0.02 प्रतिशत या मेटासिस्टॉक्स 0.1 प्रतिशत का छिड़काव कर दें। छिड़काव 15-20 दिनों के अंतराल पर दोहराएं और कुल 3-4 छिड़काव करें।

कटाई

वर्षा ऋतु में जब पौधों की अधिकतर फलियां पककर काली हो जाती हैं, तो फसल काटी जा सकती है। जब 50 प्रतिशत फलियां पक जाएं, फलियों की पहली तुड़ाई कर लेनी चाहिए। इसके बाद दूसरी बार फलियों के पकने पर कटाई की जा सकती है। फलियों को खेत में सूखी अवस्था में अधिक समय तक छोड़ने से वे चटक जाती हैं और दाने बिखर जाते हैं, जिससे उपज की हानि होती है। फलियों से बीज को समय पर निकाल दें।

तिल

जल प्रबंधन

यदि बरसात न हुई हो, तो फूल निकलते समय व दाना बनते समय भूमि में पर्याप्त नमी बनाए रखने के लिए सिंचाई अवश्य करें।

कटाई

तिल की पत्तियां जब पीली होकर गिरने लगें तथा फलियां हरा रंग लिए हुए पीली हो जाएं, तब समझना चाहिए कि फसल पककर तैयार हो गई है। इस समय फसल की कटाई कर लेनी चाहिए। देरी से कटाई करने पर फलियों के चटकने से बहुत अधिक नुकसान होता है। कटाई संपूर्ण पौधे सहित नीचे से करनी चाहिए।

कटाई के बाद बंडल बनाकर खेत अथवा खलिहान में ही जगह-जगह पर छोटे-छोटे ढेर में खड़े कर देने चाहिए। जब पौधे अच्छी तरह सूख जाएं, तब डंडे की सहायता से पौधों को पीटकर या हल्का झाड़कर बीज निकाल लेने चाहिए। उसके बाद दानों को अच्छी तरह साफ करके धूप में सुखाएं। दानों में नमी की मात्रा लगभग 8-10 प्रतिशत हो, तब भंडार पात्रों/भंडारगृहों में भंडारित करें।

उपज

उन्नत तकनीक अपनाने एवं उचित वर्षा होने पर असिंचित अवस्था में उगाई गई फसल से 4-5 क्विंटल तथा सिंचित अवस्था में 6-8 क्विंटल प्रति हैक्टर तक उपज प्राप्त होती है।

मूंगफली की पौध बढ़वार

मूंगफली

जल प्रबंधन

मूंगफली में खूंटियां बनते समय तथा फलियां बनते समय खेत में पर्याप्त नमी बनाए रखें व अधिक वर्षा होने की स्थिति में खेत में जल निकास की व्यवस्था करें।

पौध संरक्षण

टिक्का रोग की रोकथाम के लिए जिंक मैंग्नीज कार्बोमेट 2 कि.ग्रा. अथवा जिनेब 75 प्रतिशत की 2.5 कि.ग्रा. मात्रा प्रति हैक्टर की दर से 800 लीटर पानी में घोलकर 10 दिनों के अंतराल पर 1-2 छिड़काव करें। इसके लिए ट्राइकोडर्मा विरिडी (5 प्रतिशत) और वर्टीसीलियम लिशेनायी (5 प्रतिशत) का छिड़काव उपयोगी सिद्ध हो सकता है।

अगेती तोरिया

जलवायु एवं मृदा

तोरिया अथवा लाही की फसल के लिए 25 से 30 डिग्री सेल्सियस तापमान की आवश्यकता होती है। अधिक या कम

तापमान होने पर फसल में विकृति आने लगती है। तोरिया की खेती के लिए रेतीली दोमट एवं हल्की दोमट मृदा अधिक उपयुक्त है। भूमि क्षारीय एवं लवणीय नहीं होनी चाहिए। खेत में जल निकासी का उचित प्रबंधन होना चाहिए।

समय

तोरिया की खेती अधिकांशत: बारानी की जाती है। बारानी खेती के लिए खेत को खरीफ में परती छोड़ना चाहिए। तोरिया की बुआई के लिए सितम्बर का दूसरा पखवाड़ा सबसे उत्तम है। यदि खेत मक्का, बाजरा, मूंग, उड़द, तिल, लोबिया फसलों के कटने से खाली हो, तो तोरिया की फसल सितम्बर के पहले सप्ताह में लगा दें। इससे बरसात की नमी का पूरा उपयोग होगा तथा 6-7 क्विंटल पैदावार भी मिलेगी।

खेत की तैयारी

पहली जुताई वर्षा ऋतु में मृदा पलटने वाले हल से करें। इसके बाद 3 से 4 जुताई करें। प्रत्येक जुताई के बाद पाटा अवश्य लगाएं, जिससे भूमि में नमी की कमी न हो और मृदा भुरभुरी हो जाए। सिंचित खेती के लिए भूमि की तैयारी बुआई के 3 से 4 सप्ताह पूर्व प्रारंभ करें।

किस्मों का चयन

अगेती तोरिया के लिए उन्नत प्रजातियां जैसे टाइप-9, भवानी, टाइप-1, पी.टी.-303, पी. टी.-507, संगम टी.एल.-15, जवाहर तोरिया-1, पन्त तोरिया-303, राज विजय तोरिया-3, बस्तर तोरिया-1, तपेश्वरी, पूसा सरसों-25, पूसा सरसों-27, पूसा सरसों-28, पूसा तारक, पूसा महक व पूसा अग्रणी उन्नत प्रजातियां हैं।

बीजदर, दूरी व थिनिंग

तोरिया की बुआई 2 से 2.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. कार्बेण्डाजिम से बीज उपचारित कर 4-5 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर की दर से 30×10-15 सें.मी. की दूरी पर 3-4 सें.मी. गहरे कूड़ों में करें। घने पौधों को बुआई के 15 दिनों के अंदर निकालकर पौधों की आपस की दूरी 10 से 15 सें.मी. कर देनी चाहिए।

पोषक तत्व प्रबंधन

तोरिया की फसल में खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करें। मृदा परीक्षण न होने पर सिंचित दशा में बुआई के समय 60-80 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 50 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 50 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर की दर से प्रयोग करें। असिंचित दशा में 50 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 30 कि.ग्रा. फॉस्फोरस व 30 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर की दर से प्रयोग करें। साथ ही 30 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से सल्फर का प्रयोग अवश्य करें।

गन्ने की उन्नत किस्म

खरपतवार प्रबंधन

खरपतवारों के नियंत्रण के लिए बुआई से पूर्व फ्लूक्लोरेलिन 2.0 लीटर प्रति हैक्टर की दर से 500 से 600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। खरपतवार ज्यादा हों तो पेंडीमेथिलीन 30 ई.सी. को 3.3 लीटर की दर से 800 लीटर पानी में घोलकर बुआई के बाद और जमाव से पहले छिड़काव करना चाहिए। फसल को खरपतवारों से मुक्त रखने के लिए 20-25 दिनों में एक बार निराई-गुड़ाई करना आवश्यक है। यह देखा गया है कि इस निराई के बाद सरसों की फसल अच्छी तरह और जल्दी बढ़ती है।

शरदकालीन गन्ना

समय व खेत की तैयारी

शरदकालीन गन्ने की बुआई का उपयुक्त समय वर्षा समाप्त होने व जाड़ा शुरू होने के मध्य सितम्बर से अक्तूबर तक ही सीमित रहता है। अत: इस बुआई का लाभ उठाने की दृष्टि से समय से बुआई करें। जिन खेतों में हरी खाद हेतु ढैंचा एवं सनई की बुआई करके पलट दिया गया था, उनकी अच्छी तरह से जुताई करके खेत की तैयारी करें।

बुआई की विधि

गन्ने की बुआई यदि नाली विधि द्वारा करनी है, तो नालियां शीघ्र ही बना लें। समतल विधि द्वारा बुआई के समय दो पंख वाले हल से कूड़ खोलकर बुआई की जाए। दोनों विधियों में गन्ने की पंक्ति पूर्व से पश्चिम ही रखें व पंक्ति से पंक्ति की दूरी 90 सें.मी. रखें।

बीज का चयन व बीजदर

बुआई हेतु बीज प्रमाणित पौधशालाओं से ही लें। बुआई हेतु देर से पकने वाली प्रजातियों का चयन किया जाना चाहिए। बुआई के समय तीन आंख के टुकड़े काटना चाहिए। प्रति हैक्टर बुआई हेतु गन्ने की मोटाई के अनुसार 50 से 60 क्विंटल बीज अथवा 37,000-40,000 तक तीन आंख वाले टुकड़ों की आवश्यकता होती है।

बीजोपचार

बुआई से पूर्व तीन आंख के टुकड़ों को किसी पारायुक्त दवा, जैसे एरीकॉन 2

बसन्तकालीन गन्ना

बंधाई

इस माह में गन्ने की तीसरी बंधाई का कार्य पूरा कर लें। पहली पंक्ति के अंदर ही सवा से डेढ़ मीटर की ऊंचाई पर गन्ने को बांध दें। आगे चलकर दोनों पंक्तियों के गन्ने को एक-दूसरे से बांध दें। ध्यान रहे, बांधते समय ऊपर की पत्तियां न टूटें।

पौध संरक्षण

पायरीला कीट की रोकथाम हेतु प्रति हैक्टर फॉस्फेमिडॉन 400 मि.ली. या मिथाइल डिमेटॉन 1.5 लीटर को 1000 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। गन्ने में गुरदासपुर बेधक व शीर्ष बेधक (टॉप बोरर) की रोकथाम के लिए क्लोरोपायरीफॉस 20 प्रतिशत ई.सी. 1.5 लीटर अथवा मोनोक्रोटोफॉस 36 प्रतिशत की 2.0 लीटर मात्रा को 800-1000 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

प्रतिशत या 6 प्रतिशत या एगलॉल 3 प्रतिशत अथवा टफासॉन 3 प्रतिशत या 6 प्रतिशत में से किसी एक घोल में डुबोकर बोना चाहिए। 3 प्रतिशत खुराक वाली दवा की 560 ग्राम मात्रा या 6 प्रतिशत खुराक वाली दवा की 280 ग्राम मात्रा को 112 लीटर पानी में घोलकर बीज को उपचारित करें।

मिश्रित खेती

शरदकालीन बुआई के साथ मिश्रित खेती करना आर्थिक दृष्टि से लाभप्रद सिद्ध हुआ है, इसलिए रबी की जो फसलें जिन क्षेत्रों में अधिक प्रचलित हैं, लेनी चाहिए। मिश्रित खेती में प्रायः बौनी प्रजातियों के गेहूं, मटर, धनिया, आलू आदि सरलतापूर्वक ले सकते हैं।

पोषक तत्व प्रबंधन

गन्ने की फसल में खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करें। बुआई के समय 25 से 50 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हैक्टर प्रयोग करना चाहिए।

कपास

बढ़वार विनियमन

अमेरिकन कपास में ज्यादा फैलाव रोकने के लिए 30 मि.ली. साइकोसिल (70 प्रतिशत) को 300 लीटर पानी में घोलकर आवश्यकतानुसार

कपास की भरपूर उपज

छिड़काव करें। इसके साथ कीटनाशक तथा यूरिया भी मिलाकर छिड़का जा सकता है। कपास में फूल आने पर नेफ्थलीन एसिटिक एसिड का 50 मि.ली. फिर 20 दिनों बाद 70 मि.ली. का घोल छिड़कने से फूल व टिण्डे गिरते नहीं हैं तथा टिण्डे भी बड़े लगते हैं। कपास में आखिरी सिंचाई 33 प्रतिशत टिण्डे खुलने तक कर दें, इसके बाद कोई सिंचाई न करें।

चुनाई

कपास में फूल काफी लंबी अवधि तक आते हैं। सभी पौधों पर फूल एक साथ नहीं आते और प्रत्येक पौधे पर भी सारे फूल एक साथ नहीं आते हैं। फसल बोने के दो-ढाई महीने बाद फूल खिलने शुरू हो जाते हैं। फूलों के एक साथ न खिलने के कारण कपास की चुनाई काफी समय तक चलती रहती है। जब काफी संख्या में गूले पक जाएं, तो पहली चुनाई की जाती है। देसी कपास सितम्बर में चुनने के लिए तैयार होती है। 10 दिनों के अंतराल पर सूखी व साफ कपास की चुनाई करें। इस प्रकार चुनाई कई बार करनी पड़ती है।

सब्जी फसलें

कद्दूवर्गीय सब्जियां

जब फल कच्चे व मुलायम हों, तब बेल वाली फसलों जैसे खीरा, घीया, तोरई, करेला व कद्दू की तुड़ाई कर बाजार भेजें। कद्दूवर्गीय फसलों में आवश्यकतानुसार निराई-गुड़ाई एवं सिंचाई करते रहें।

लोबिया

लोबिया की फसल में आवश्यकतानुसार निराई-गुड़ाई एवं सिंचाई करें। तैयार फलियों की तुड़ाई नियमित रूप से 4-5 दिनों के अंतराल पर करें।

बैंगन और मिर्च

रोपाई के 45 दिनों बाद बैंगन में 50 कि.ग्रा. नाइट्रोजन व मिर्च में 35 कि.ग्रा. नाइट्रोजन की दूसरी व अंतिम टॉप ड्रेसिंग करें। तनाछेदक कीट की सुंडी पौधों के प्रोह को नुकसान पहुंचाती है तथा बाद में मुख्य तने में घुस जाती है। छोटे ग्रसित पौधे मुरझाकर

लौकी

कपास में पौध संरक्षण

इस फसल में दीमक और हरे तिले का प्रकोप होने के साथ-साथ कलियों, फूलों एवं टिण्डों पर अमेरिकन सुंडी का आक्रमण भी देखा जाता है। इनके नियंत्रण के लिए 1 लीटर पानी में 70 मि.ली. क्लोरोपायरीफॉस तथा उपयुक्त चिपकने वाला पदार्थ मिलाकर छिड़काव करें। कपास में अमेरिकन बॉलवर्म, गुलाबी बॉलवर्म और चित्तीदार बॉलवर्म प्रमुख हानिकारक कीट हैं, जो फसल को काफी नुकसान पहुंचा सकते हैं। इन कीटों के प्रबंधन के लिए बुआई से पहले बीज को इमिडाक्लोप्रिड की 7.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें। फसल की 45 और 55 दिन की अवस्था में 5 प्रतिशत नीम बीज गिरी निष्कर्षण का छिड़काव करें। अमेरिकन बॉलवर्म का प्रकोप दिखाई देने पर एन.पी.वी. 250 एल.ई. प्रति हैक्टर की दर से छिड़कें। इसके अतिरिक्त बीटी आधारित जैव-कीटनाशी का 1.5 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव किया जा सकता है।

गोभीवर्गीय सब्जियां

बंदगोभी, गांठगोभी एवं मध्यकालीन व पछेती फूलगोभी की नर्सरी में बुआई करें, जिससे अक्तूबर महीने में इनकी रोपाई की जा सके। पत्तागोभी की रोपाई सितम्बर के अंतिम सप्ताह से भी प्रारंभ कर सकते हैं। रोपाई से पूर्व 200-250 क्विंटल सड़ी गोबर की खाद या 80 क्विंटल नाडेप कम्पोस्ट, 50 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस व 60 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर की दर से खेत में अंतिम जुताई के समय मिला दें।

बैंगन की उन्नत प्रजाति

सूख जाते हैं एवं बड़े पौधे बौने रह जाते हैं तथा इनमें फल कम लगते हैं। साथ ही फल और तनाछेदक कीट की सुंडी पौधे के प्ररोह व फल को हानि पहुंचाती है।

फलों में सुंडियां टेढ़ी-मेढ़ी सुरंगें बनाती हैं व फल का ग्रसित भाग काला पड़ जाता है तथा खाने योग्य नहीं रहता। फलछेदक की निगरानी के लिए 5 फेरोमोन ट्रैप प्रति हैक्टर लगाएं। बैंगन में तना व फल छेदक कीट की रोकथाम के लिए 5 प्रतिशत नीम बीज अर्क या बी.टी. 1 ग्राम प्रति लीटर या स्पिनोसेड 45 एस.सी. 1 मि.ली. प्रति 4 लीटर या कार्बेरिल 50 डब्ल्यू.पी. 2 ग्राम प्रति लीटर या डेल्टामेथ्रिन 1 मि.ली. प्रति लीटर का फूल आने से पहले 10-15 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें। मिर्च की फसल में आवश्यकतानुसार निराई-गुड़ाई एवं सिंचाई करें।

टमाटर

इस फसल की अच्छी पैदावार में तापमान का बहुत बड़ा योगदान होता है, जो 18 से 27 डिग्री सेल्सियस के बीच उपयुक्त रहता है। टमाटर की खेती के लिए उचित जल निकास वाली दोमट मृदा उपयुक्त रहती है, जिसका पी-एच मान 6-7 हो। टमाटर की उन्नत और संकर प्रजातियों के बीज की बुआई नर्सरी में करें।

अगेती किस्मों जैसे-गोल्डन एकड़, पूसा हाइब्रिड-2, पूसा सदाबहार, पूसा रोहिणी, पूसा-120, पूसा गौरव, काशी अभिमान, काशी अमृत, काशी विशेष, पी.एच.-8, पी.एच.-4 की बुआई 15 सितम्बर तक व पछेती किस्मों/संकर किस्मों की बुआई 15 सितम्बर के बाद प्रारंभ करें। अच्छा उत्पादन प्राप्त करने के लिए संकर और उन्नत प्रजातियों के लिए क्रमशः 250-300 ग्राम और 500-600 ग्राम प्रति हैक्टर बीज पर्याप्त होता है।

टमाटर की बौनी किस्मों की रोपाई 60×60 सें.मी. तथा अधिक बढ़ने वाली किस्मों की रोपाई 75×60 सें.मी. पर करें। टमाटर की रोपाई के समय प्रति हैक्टर 250 क्विंटल सड़ी गोबर की खाद अथवा 80 क्विंटल नाडेप कम्पोस्ट के साथ 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 50 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 80 कि.ग्रा. पोटाश, 20 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट व 8 कि.ग्रा. बोरेक्स का प्रयोग करें। खरपतवार नियंत्रण के लिए पेण्डीमिथेलीन (30 ई.सी.) 1 लीटर प्रति हैक्टर को 200 लीटर पानी में रोपाई से पहले छिड़काव करें।

मटर

इसकी अगेती प्रजातियों की बुआई सितम्बर के अंतिम सप्ताह से लेकर अक्तूबर के मध्य तक कर सकते हैं। मटर की खेती के लिए दोमट और हल्की दोमट मृदा उपयुक्त होती है। मटर की अगेती प्रजातियां जैसे-आजाद मटर-3, काशी नंदिनी, काशी मुक्ति, काशी उदय और काशी अगेती प्रमुख हैं, जो 50 से लेकर 60 दिनों में तैयार हो जाती हैं, जिससे खेत जल्दी खाली हो जाता है और दूसरी फसलों की बुआई भी कर सकते हैं।

अगेती सब्जी मटर की उन्नत प्रजाति

बुआई के लिए प्रति हैक्टर 80 से लेकर 100 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता पड़ती है। मटर को बीज जनित रोगों से बचाने के लिए मैंकोजेब 3 ग्राम या थीरम 2 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए।

अगेती प्रजातियों के लिए पंक्ति से पंक्ति एवं पौधे से पौधे की दूरी 30×6-8 सें.मी. पर्याप्त है। खेत की तैयारी के समय प्रति हैक्टर 20-25 टन सड़ी गोबर की खाद के साथ 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 50 कि.ग्रा. पोटाश का प्रयोग करें।

भिंडी

इस फसल में आवश्यकतानुसार निराई-गुड़ाई एवं सिंचाई करें। तैयार फलियों की तुड़ाई नियमित रूप से 4-5 दिनों के अंतराल पर करें।

आलू

अगेती फसल की बुआई सितम्बर के आखिरी सप्ताह से लेकर अक्तूबर के दूसरे सप्ताह तक की जा सकती है।

आलू

इसकी खेती के लिए दोमट और बलुई दोमट मृदा, जिनमें जैविक पदार्थ की बहुलता हो, उपयुक्त हैं। अगेती आलू की कुफरी चन्द्रमुखी, कुफरी कुबेर, कुफरी बहार, कुफरी सूर्या, कुफरी अशोका तथा अल्टीमेटम प्रजातियां मुख्य हैं। खेत की आखिरी जुताई पर 100 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 80 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 80 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर की दर से बुआई के समय प्रयोग करें।

फूलगोभी

पुरानी फूलगोभी की फसल में आवश्यकतानुसार निराई-गुड़ाई एवं सिंचाई करें। 50 कि.ग्रा. यूरिया प्रति हैक्टर की दर से खड़ी फसल में प्रयोग करें। मध्यकालीन फूलगोभी की उन्नत प्रजातियां जैसे इम्प्रूवड जापानीज, पूसा दीवाली, पूसा कातकी, पन्त शुभ्रा की रोपाई इस महीने में की जा सकती है। खेत की आखिरी जुताई पर 120 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 100 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 60 कि.ग्रा. पोटाश एवं 10 कि.ग्रा. बोरेक्स प्रति हैक्टर की दर से प्रयोग करें।

धनिया

इसके लिए दोमट, मटियार या कछारी भूमि, जिसमें पर्याप्त मात्रा में जीवांश और अच्छी जलधारण क्षमता हो, उपयुक्त होती है। धनिया की उन्नत प्रजातियां पंत धनिया-1, पन्त हरीतिमा, आजाद धनिया-1, मोरोक्कन, गुजरात धनिया-1, गुजरात धनिया-2, जवाहर धनिया-1, सी.एस.-6, आर.सी.आर.-4, सिंधु की बुआई माह के अंतिम पखवाड़े में वर्षा समाप्त होने पर कर सकते हैं, जिसके लिए 15-20 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर पर्याप्त होता है।

धनिया

मेथी

इस फसल की खेती के लिए जीवांशयुक्त, अच्छे जल निकास वाली दोमट चिकनी मृदा सर्वोत्तम होती है। मेथी की खेती के लिए उन्नत किस्में जैसे- पूसा अर्ली बंचिंग, मेथी कसूरी व हिसार सोनाली हैं। इनसे 6-7 कटाई प्राप्त की जा सकती हैं।

मेथी व कसूरी मेथी के लिए पंक्ति से पंक्ति एवं पौधे से पौधे की दूरी 30×4-5 सें.मी. रखनी चाहिए। खेत तैयार करते समय 17 टन प्रति हैक्टर गोबर की अच्छी सड़ी हुई देसी खाद के साथ 2.7 बोरे सिंगल सुपर फॉस्फेट तथा आधा बोरा यूरिया डालें।

पालक

इस फसल की सफलतापूर्वक खेती के लिए ठंडी जलवायु की आवश्यकता होती है। ठंड में पालक की पत्तियों की बढ़वार अधिक होती है, जबकि तापमान अधिक होने पर इसकी बढ़वार रुक जाती है, इसलिए पालक की खेती मुख्यत: शीतकाल में करना अधिक लाभकर होता है। परंतु पालक की खेती मध्यम जलवायु में वर्षभर की जा सकती है। खेती के लिए उचित जल निकास वाली चिकनी दोमट भूमि अधिक उपयुक्त होती है, जिसका पी.एच. मान 6 से 7 के मध्य हो। पालक की खेती के लिए ऑलग्रीन, पूसा ज्योति, पूसा हरित, पालक नं. 51-16, वर्जीनिया सेवोय, अर्ली स्मूथ लीफ आदि उन्नत किस्में हैं। अच्छा उत्पादन प्राप्त करने के लिए 25 से 30 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर बीज पर्याप्त होता है। भूमि में खाद व उर्वरक की मात्रा का निर्धारण करने के लिए सबसे पहले खेत की मृदा का परीक्षण करा लेना चाहिए। यदि किसी कारण से मृदा का परीक्षण समय पर न हो सके तो 25-30 टन प्रति हैक्टर गोबर की अच्छी सड़ी हुई खाद, 100 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 50 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 60 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर की दर से प्रयोग करना चाहिए। हर कटाई के बाद आधा बोरा यूरिया का प्रयोग करें।

आम

हर कटाई के बाद मेथी में आधा बोरा यूरिया का प्रयोग करें। मेथी के लिए 15-20 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर पर्याप्त होता है।

अदरक एवं हल्दी

इन फसलों में आवश्यकतानुसार निराई-गुड़ाई एवं सिंचाई करें। 50 कि.ग्रा. यूरिया प्रति हैक्टर की दर से खड़ी फसल में प्रयोग करें। झुलसा रोग दिखाई देने पर 0.2 प्रतिशत इण्डोफिल-45 दवा का घोल बनाकर एक छिड़काव अवश्य करें।

प्याज

खरीफ प्याज की रोपाई के 30 दिनों बाद खरपतवार निकालकर 35 कि.ग्रा. नाइट्रोजन की टॉप ड्रेसिंग प्रति हैक्टर की दर से करें।

फलदार वृक्षों में सस्य प्रबंधन

बेर

सितम्बर में बेर की रोपाई की जा सकती है। पौधे रोपने से पहले अवांछित पत्ते उतार दें। पौधे 27 फुट दूर लगाने से 72 वृक्ष प्रति एकड़ लग सकते हैं। नए पौधों की 17 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करें व बेर के पुराने बागों की भी सिंचाई करें।

आम

वयस्क आम के पौधों में बची हुई उर्वरक की मात्रा (500 ग्राम नाइट्रोजन, 250 ग्राम फॉस्फोरस, 500 ग्राम पोटाश प्रति पौधा) को मानसून की बारिश के पश्चात डालें। आम में गमोसिस रोग की रोकथाम हेतु प्रति पेड़ (10 वर्ष या अधिक आयु के पौधे के लिए) 250 ग्राम जिंक सल्फेट, 250 ग्राम कॉपर सल्फेट, 100 ग्राम बुझा हुआ चूना व 125 ग्राम बोरेक्स पेड़ के मुख्य तने से एक मीटर की दूरी पर 2-4 मीटर व्यास के अंदर मृदा में मिलाएं व वर्षा न होने की स्थिति में तुरंत हल्की सिंचाई कर दें। एन्थ्रैक्नोज रोग से बचाव हेतु कॉपर ऑक्सीक्लोराइड की 3 ग्राम मात्रा को 1 लीटर पानी में घोलकर आवश्यकतानुसार छिड़काव करें।

अदरक की उन्नत किस्म

अमरूद

अगस्त-सितम्बर का महीना अमरूद के पौधे लगाने के लिए उत्तम माना जाता है। बाग लगाने से पहले 3×3 फुट के गड्ढे खोद लें। गड्ढे की ऊपर की मृदा को बराबर देसी खाद के साथ मिलाकर 2 कि.ग्रा. जिप्सम डालें। पौधा लगाने के बाद साल में दो या तीन बार पेड़ की निराई-गुड़ाई करते समय फिर से गोबर की खाद देते रहें।

अमरूद

नीम की खली देने से पौधा और भी तेजी से बढ़ता है और ज्यादा फल देता है। पौधे को आवश्यकतानुसार यूरिया और पोटाश भी देना चाहिए। पौधों को शुरुआती तीन वर्षों में सिर्फ 150 से 200 ग्राम तक ही दिया जाना चाहिए और उसके बाद जैसे-जैसे पौधा बड़ा होता जाता है, उसी प्रकार इसकी मात्रा बढ़ा देनी चाहिए। दीमक वाले क्षेत्र में 10-20 मि.ली. क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. प्रति गड्ढा डालें। अमरूद की हिसार सफेदा, हिसार सुरखा, इलाहाबादी सफेदा, बनारसी सुरखा, लखनऊ-49, ललित तथा सरदार किस्मों को सितम्बर में लगाया जा सकता है। नए बागों की नियमित सिंचाई करें। अमरूद की फल-मक्खी की रोकथाम के लिए 700

लीची

मि.ली. मैलाथियॉन का 7-10 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करें।

केला

इस फसल में प्रति पौधा 55 ग्राम यूरिया पौधे से 50 सें.मी. दूर घेरे में प्रयोग कर हल्की गुड़ाई करके भूमि में मिला दें। केला बीटल की रोकथाम के लिए मोनोक्रोटोफॉस 1.25

केला

मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। कार्बोफ्यूरॉन 3-4 ग्राम या फोरेट 2 ग्राम प्रति पौधे की दर से तने के चारों ओर मृदा में मिलाएं तथा इतनी ही मात्रा गोफ में डालें।

कटहल

इसके पके फलों के बीजों को निकालकर पौधशाला में बुआई करें। नए बाग लगाने के लिए रोपण का कार्य करें।

बेल

इसके वृक्षों पर शूटहोल रोग की रोकथाम हेतु कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का छिड़काव करें। नए बाग लगाने हेतु रोपण का कार्य करें।

आंवला

इस फसल में इन्द्रबेला कीट की रोकथाम के लिए डाइक्लोरोवॉस (नुवान) एक मि.ली. प्रति लीटर पानी में बने घोल में रूई भिगोकर सलाई की मदद से छेदों में डालकर चिकनी मृदा से बंद करें। आंवला में यदि डाइबैक, स्कैब तथा सूटी मोल्ड रोग का प्रकोप हो तो कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (3 ग्राम प्रति लीटर पानी) का छिड़काव करें। कैंकर रोग की रोकथाम के लिए पौधों में स्ट्रेप्टोसाइक्लीन तथा कॉपर सल्फेट (5 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लीन, 10 ग्राम कॉपर सल्फेट प्रति 100 लीटर पानी) या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 3 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

आंवला

करौंदा

इसके पके फलों की तुड़ाई करके बीज निकाल लें तथा नए पौधे तैयार करने के लिए बीजों की पौधशाला में बुआई करें।

पुष्प उत्पादन

ग्लैडियोलस के कंद रोपण का उपयुक्त समय सितम्बर एवं अक्तूबर माह है। कंदों को 20-30×15-20 या 25×15 सें.मी. की दूरी पर 5-10 सें.मी. की गहराई पर रोपाई करें। यदि कंदों की रोपाई 20-25 दिनों के अंतराल पर कई बार में की जाए तो स्पाइक लगातार अधिक समय तक मिलती रहती है। ग्लैडियोलस की उन्नत प्रजातियां जैसे- फ्रेंडशिप व्हाइट, फ्रेंडशिप पिंक, वाटरमेलन पिंक, लिली ऑस्कर, जैकसन, विस-विस, यूरोविजन, आरती, अप्सरा, अग्नि रेखा, सपना, शोभा, सुचित्रा, मोहनी, मनोहर, मयूर, मुक्ता, मनीषा, मनहार आदि प्रमुख हैं।

ग्लैडियोलस

ग्लैडियोलस की रोपाई के लिए प्रति वर्ग मीटर 10 कि.ग्रा. सड़ी गोबर की खाद/कम्पोस्ट, 200 ग्राम सिंगल सुपर फॉस्फेट व 20 ग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश रोपाई के 15 दिन पहले अच्छी तरह क्यारियों में मिला दें।

गेंदा

गेंदा, कैलेंडुला, बिगोनिया, गुलदाउदी, डहेलिया, सूरजमुखी, जिनिया, डॉग फ्लावर, कॉरनेशन, पॉपी, लार्कस्पर इत्यादि पुष्पों के लिए क्यारियां अच्छी तरह तैयार करके बुआई कर दें, ताकि सर्दियों में आप सुंदर फूलों का आनंद ले सकें। रजनीगंधा के स्पाइक की कटाई करके बाजार में बिक्री हेतु भेजें।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
के चुनिंदा हिन्दी प्रकाशन

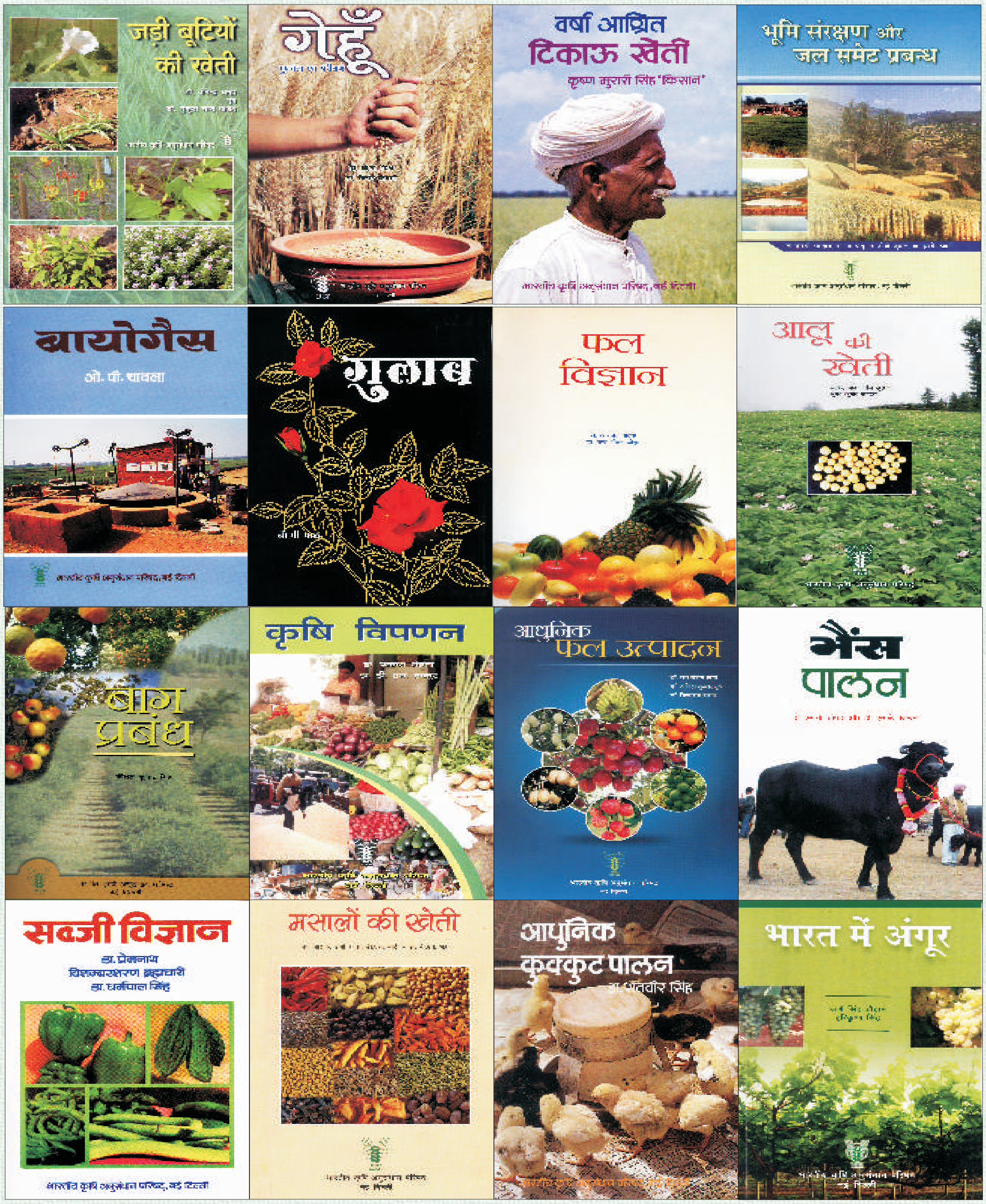

संपर्क सूत्र: प्रभारी, व्यवसाय एकक

कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

कृषि अनुसंधान भवन, पूसा, नई दिल्ली -110 012

दूरभाष: 011-25843657, E-mail: bmicar.org.in

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा प्रकाशित लोकप्रिय बागवानी पत्रिका

'फल फूल'

(द्विमासिक)

- विभिन्न प्रकार के फलों के उत्पादन की विधियां
- पुष्पोत्पादन और सब्जी उत्पादन की उन्नत तकनीकें
- फल प्रसंस्करण की नई विधियां
- बागवानी से आमदनी
- फल बागानों का वैज्ञानिक प्रबंधन
- नर्सरी से कमाई
- फलों और पुष्पों की व्यावसायिक खेती
- नई किस्में
- नियमित स्तंभ 'अगले माह के बागवानी कार्यकलाप' फल और फूलों के क्षेत्र की अनुसंधान उपलब्धियों की जानकारियों सहित बागवानी के विविध सामयिक मुद्दों पर कृषि वैज्ञानिकों के लेखों का प्रकाशन

पत्रिका मूल्यः
एक प्रति : 50 रुपये
वार्षिक सदस्यता शुल्क : 250 रुपये

मंगाने के लिए संपर्क करें

व्यवसाय प्रबंधक
कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन–1, पूसा गेट
नई दिल्ली–110012
दूरभाष : 011–25843657, ईमेल : bmicar@icar.org.in
वेबसाइट : www.icar.org.in

आधुनिक सस्य क्रियाएं

भारतीय कृषि आज कई नई चुनौतियों का सामना कर रही है। जलवायु परिवर्तन, घटते प्राकृतिक संसाधन, बढ़ती खेती की लागत और किसानों की आय बढ़ाने की आवश्यकता ने आधुनिक खेती को समय की सबसे बड़ी जरूरत बना दिया है। ऐसे समय में 'आधुनिक सस्य क्रियाएं' पुस्तक आधुनिक फसल प्रबंधन की वैज्ञानिक जानकारी को सरल और सहज भाषा में प्रस्तुत करती है। यह पुस्तक केवल विद्यार्थियों और कृषि वैज्ञानिकों के लिए ही नहीं, बल्कि किसानों, कृषि प्रसार कार्यकर्ताओं और खेती में रुचि रखने वाले सभी पाठकों के लिए उपयोगी है।

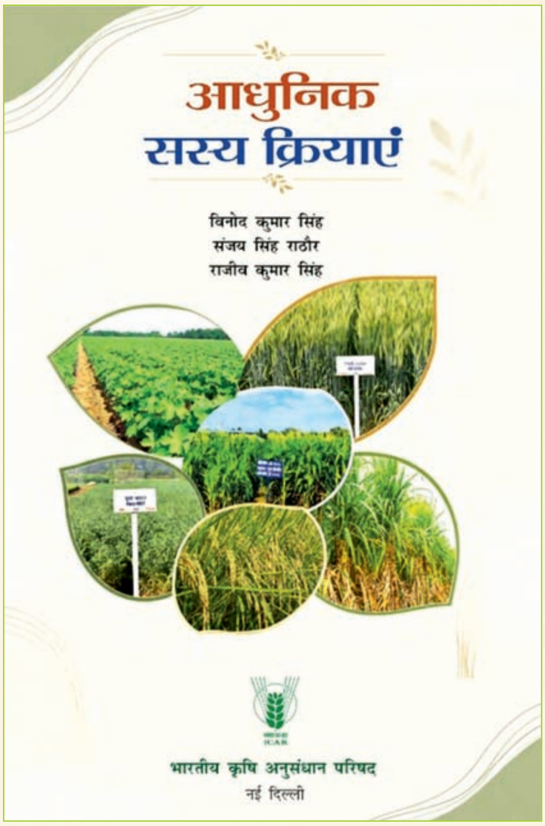

इस पुस्तक का उद्देश्य आधुनिक खेती से जुड़ी नई तकनीकों को आसान भाषा में समझाना है, ताकि किसान कम लागत में अधिक उत्पादन और बेहतर लाभ प्राप्त कर सकें। इसमें बताया गया है कि अधिक जुताई, उर्वरकों और रसायनों का असंतुलित प्रयोग तथा जल का अनुचित उपयोग न केवल खेती की लागत बढ़ाते हैं, बल्कि मृदा और पर्यावरण को भी नुकसान पहुंचाते हैं। पुस्तक इन समस्याओं के व्यावहारिक और वैज्ञानिक समाधान प्रस्तुत करती है।

यह पुस्तक डा. विनोद कुमार सिंह, डा. संजय सिंह राठौर और डा. राजीव कुमार सिंह के वर्षों के अनुसंधान, अनुभव और कृषि क्षेत्र में किए गए कार्यों का परिणाम है। तीनों लेखक भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (भाकृअनुप) के प्रतिष्ठित वैज्ञानिक हैं। इन्होंने आधुनिक सस्य प्रबंधन से जुड़ी महत्वपूर्ण जानकारियों को सरल और स्पष्ट भाषा में प्रस्तुत किया है, जिससे विद्यार्थी, शिक्षक, शोधकर्ता, कृषि प्रसार कार्यकर्ता और किसान सभी आसानी से लाभ उठा सकते हैं।

लगभग 469 पृष्ठों की इस पुस्तक में 31 अध्याय हैं। इसमें आधुनिक सस्य प्रबंधन की मूल अवधारणा से लेकर फसल उत्पादन के प्रत्येक महत्वपूर्ण चरण की विस्तृत जानकारी दी गई है। पुस्तक में खेत की तैयारी, बीज चयन, बुआई, फसलचक्र, फसल विविधीकरण, सटीक पोषक तत्व प्रबंधन, सिंचाई प्रबंधन, खरपतवार नियंत्रण, फसल स्थापना तकनीक तथा आधुनिक कृषि तकनीकों का सरल ढंग से वर्णन किया गया है।

पुस्तक में देश की प्रमुख फसलों, उनकी उत्पादकता, विभिन्न कृषि-जलवायु क्षेत्रों में उनकी स्थिति तथा फसल प्रणालियों से संबंधित अद्यतन जानकारी भी दी गई है। इसके साथ ही उत्पादन बढ़ाने, लागत कम करने और प्राकृतिक संसाधनों का बेहतर उपयोग करने के उपायों को भी सरल भाषा में समझाया गया है। यही कारण है कि यह पुस्तक केवल सैद्धांतिक जानकारी तक सीमित नहीं रहती, बल्कि खेती की वास्तविक समस्याओं का समाधान भी प्रस्तुत करती है।

वैज्ञानिक विषय होने के बावजूद इसे सरल, स्पष्ट और प्रवाहपूर्ण भाषा में लिखा गया है। कठिन कृषि शब्दों को भी आसान तरीके से समझाया गया है, जिससे सामान्य पाठक भी विषय को बिना कठिनाई समझ सकता है। यही विशेषता इसे एक उपयोगी संदर्भ ग्रंथ के साथ-साथ व्यावहारिक मार्गदर्शिका भी बनाती है।

यह पुस्तक कृषि महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों के विद्यार्थियों, शिक्षकों, कृषि वैज्ञानिकों, प्रसार कार्यकर्ताओं, शोधकर्ताओं और किसानों, सभी के लिए समान रूप से उपयोगी है। ■

पुस्तक उपलब्धता

'आधुनिक सस्य क्रियाएं' आधुनिक, वैज्ञानिक और टिकाऊ खेती को समझने के लिए एक महत्वपूर्ण पुस्तक है। सरल भाषा, उपयोगी विषय वस्तु और व्यावहारिक दृष्टिकोण इसे विशेष बनाते हैं। 469 पृष्ठों में समाहित यह पुस्तक आधुनिक फसल प्रबंधन की लगभग सभी आवश्यक जानकारियां एक ही स्थान पर उपलब्ध करवाती है। इस पुस्तक का मूल्य मात्र 1500 रुपये है और इसे कृषि ज्ञान प्रबंधन निदेशालय, कृषि अनुसंधान भवन-1, नई दिल्ली से प्राप्त किया जा सकता है। आधुनिक खेती को वैज्ञानिक और लाभकारी बनाने की दिशा में यह पुस्तक किसानों, विद्यार्थियों, शिक्षकों, कृषि प्रसार कार्यकर्ताओं, पर्यावरणविदों और शोधकर्ताओं के लिए निश्चित रूप से एक उपयोगी एवं संग्रहणीय ग्रंथ है।

पंजीकरण संख्या 14252/57 पंजीयक, समाचार पत्र, भारत सरकार
दिल्ली पोस्टल पंजीकृत संख्या DL(C)-12/1145/10-12
ISSN 0023-1088
मूल्य: ₹ 50

डा. अनुराधा अग्रवाल, परियोजना निदेशक, कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय द्वारा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के लिए प्रकाशित तथा मैसर्स चन्दु प्रेस, 469, पटपड़गंज इंडस्ट्रियल एस्टेट, दिल्ली-110092 से लेजरटाईपसैट एवं मुद्रित। संपादक: सुनीता अरोड़ा